निर्दलीय

अंतरराष्ट्रीय मासिक पत्रिका

- साहित्य
- कला
- संस्कृति
- उद्यमिता

प्रधान संपादक- कैलाश आदमी

उप संपादक : सरिता गर्ग 'सरि'

प्रवासी संपादक : डॉ. सुनीता शर्मा

वर्ष : २० | अंक : ०८ | नई दिल्ली, फरवरी २०२६ | मूल्य : १०/- | विशेषांक : ५०/-

अभिव्यक्ति विशेषांक

अनुभव की कूची से भरें कल्पनाओं के ऐसे रंग।
किसी के अपमान में न बदले अभिव्यक्ति का ढंग।।

- कैलाश आदमी

(आमुख) पृष्ठ ४-६

मासिक 'निर्दलीय' के आगामी अंक

विगत दो दशकों से नियमित प्रकाशित निर्दलीय प्रकाशन की बहुरंगी अंतर्राष्ट्रीय मासिक पत्रिका 'निर्दलीय' प्रति माह विशेषांक के रूप मे प्रकाशित हो रही है। नई दिल्ली स्थित सलाहकार श्री सुरेश खांडवेकर एवं श्रीमती कविता मल्होत्रा और संरक्षक सेठ रामनिवास गुप्ता एवं श्री रमेश सिंह राघव के सहयोग से मासिक पत्रिका की साज-साज्जा और सामग्री में निरंतर उत्कृष्टता एवं विकास परिलक्षित है। इस तारतम्य में आगामी वर्ष २०२५-२६ के लिए संपादकीय मंडल ने बारह विषयों का चयन किया है । आप सभी से प्रार्थना है कि आप इन विषयों पर अपने आलेख, खट्टे मीठे अनुभव, काव्य, कथा-कहानी,कविता, प्रहसन,संस्मरण अदि मासिक पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेज सकते हैं। आपसे निवेदन है निम्नलिखित विषयों पर प्रकाशित होने जा रहे निर्दलीय मासिक पत्रिका के विशेषांकों के लिए विषयांतर्गत सामग्री अवश्य भेजें। माहवार विषय इस प्रकार है--

अप्रैल - फुर्सत, मई -सैर सपाटा, जून-मुखर अभिव्यक्ति, जुलाई- निर्दलीय के अंतरराष्ट्रीय वार्षिक सम्मान समारोह पर केंद्रित, अगस्त - स्वाधीनता और लोकतंत्र, सितंबर - भाषाई सौहार्द, अक्टूबर - पुस्तकें ही जीवन, नवंबर- शिक्षा और साहित्य, दिसंबर - पर्यावरण एवं जलवायु संरक्षण, जनवरी- नया साल, नया सोच, फरवरी-आनंद।

माह मार्च २०२६ में प्रकाशित होने जा रहे विशेषांक हेतु - 'वासंती उल्लास' विषय पर रचनाएं/आलेख १० मार्च २०२६ तक व्हाट्स ऐप/मेल पर मिल जाना चाहिए।

* कैलाश आदमी, संस्थापक संपादक
9424443401/ ८८३९७९७४४८
मेल nirdaliyadaily@gmail.com

निर्दलीय से जुड़ना अब आसान

निर्दलीय दैनिक / साप्ताहिक /मासिक (मुद्रित आकार)का शुल्क भेजना अब आसान हो गया है क्योंकि अब आप भारतीय स्टेट बैंक, मुख्य शाखा भोपाल के हमारे निर्दलीय के खाता क्रमांक- 30030303507(IFSC code- sbin0001308 के अलावा हमारे मोबाइल फोन 9424443401 से जुड़े फोन पे या गूगल पे से भी शुल्क /सहयोग राशि भेज सकते हैं। दैनिक,साप्ताहिक व मासिक मुद्रित के साथ ई-पेपर भी हैं। ई-पत्रिका या पेपर हेतु शुल्क भेजना ऐच्छिक है।

मासिक निर्दलीय वार्षिकः स्पीड पोस्ट रु. 2100/-

संरक्षक/सलाहकार पद प्रतिष्ठार्थ

वार्षिक - 5000/- तीन वर्ष 11000/-

संरक्षक/सलाहकार- रु. 20000/-

नोट- दैनिक निर्दलीय प्रति अंक दो रु. (वार्षिक स्पीड पोस्ट से 2100 रु), साप्ताहिक 'निर्दलीय' प्रति अंक पांच रु.(वार्षिक शुल्क 1100 रु) स्पीड पोस्ट से 2100 रु. । साप्ताहिक व मासिक निर्दलीय दोनों स्पीड पोस्ट से मंगवाना है तो कुल राशि 3200 रु. भेजें।

व्यवस्थापकीय पता -निर्दलीय प्रकाशन, एफ 116/7 शिवाजी नगर, भोपाल 462016

खाताधारक का नाम- निर्दलीय Nirdaliya
बैंक-भारतीय स्टेट बैंक
शाखा- मुख्य शाखा, भोपाल 462003
खाता क्र. 30030303507
आईएफएससी कोड (कूट संकेत) -एसबीआईएन 0001308
(sbin 0001308)

दैनिक निर्दलीय, साप्ताहिक निर्दलीय और मासिक निर्दलीय की वार्षिक ग्राहकी/संरक्षक/सलाहकार सहयोग राशि हेतु दूरभाष क्र. 9424443401/8839797448 पर phone pay/Google pay के जरिए जमा कर स्क्रीन प्रिंट भेजें।

-प्रबंधक

UPI ID: nirdaliyadaily@okhdfcbank

अंतरंग

स्तंभ	शीर्षक	लेखक/ कवि/समीक्षक	पृष्ठ
आमुख	अनुभव की कूची से...	कैलाश आदमी	४-६
आलेख	शांतिपूर्ण विरोध	शीला श्रीवास्तव	७
कविता	रच रहा है साजिशें	मोनिका डागा	७
आलेख	मौलिक अधिकार है	रति दिनेश चौबे	८
कविता	सरल होना दुरुह क्यों?	डॉ. सुनीता त्रिपाठी	८
आलेख	अवसरवादिता	शशि प्रभा शाक्य	९
--,,--	जीवंत लोकतंत्र	कविता मल्होत्रा	१०
--,,--	अभिव्यक्ति का अर्थ	चंचलिका शर्मा	११
--,,--	वाणी स्वातंत्र्य	वाणी नित्या	१२
कविता	कमरों में बंद	रमा निगम	१२
आलेख	संवैधानिक उपहार	इंदिरा किसलय	१३
--,,--	भारत में अभिव्यक्ति	कृष्णदेव चतुर्वेदी	१४
कविता	वाणी की देहलीज तले	डॉ. सीमा अग्रवाल	१४
आलेख	अभिव्यक्ति की आड़ में	शशि पाटनी	१५
--,,--	भारतीय प्रजातंत्र	सविता व्यास	१६
--,,--	लोकतंत्र को जीवंत	सुनीता शर्मा 'सिद्धि'	१७
--,,--	वैचारिक अभिव्यक्ति	संजीव ठाकुर	१८
--,,--	निगहबानी की दरकार	प्रिंस अभिशेख अज्ञानी	१९
--,,--	बोलो पर सोच समझकर	बल्लभ किशोर शर्मा	२०
--,,--	संस्कृति से संविधान तक	विवेक रंजन श्रीवास्तव	२१
व्यंग्य	वाणी स्वातंत्र्य	शशिकांत गुप्ते	२२
आलेख	अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर हमला	विजय दलाल	२३
--,,--	मौलिक मानवाधिकार	वंदना सहाय	२४
कविता	५० साल पूरे हुए	अंबरीष तिवारी	२५
आलेख	लोकतंत्र की आत्मा	मनोज चतुर्वेदी	२६
कविता	बस प्रतिध्वनि	सरिता गर्ग 'सरि'	२६
आलेख	दुरूपयोग रोकें	आशा लता दुबे	२७
--,,--	संकट में अभिव्यक्ति	द्रौपदी साहू	२८
--,,--	संसद में टूट रही मर्यादा	डॉ. प्रियंका सौरभ	२९
--,,--	नेपाल में संसदीय चुनाव	विनोद कुमार विश्वकर्मा	३०-३२
--,,--	वैचारिक यात्रा	राज गोपाल पीवी	३५

अंतर्राष्ट्रीय मासिक पत्रिका निर्दलीय

संरक्षक/सलाहकार सुरेन्द्रनाथ दुबे, मेघा पाटकर, डॉ। पवन कुमार जैन, सोहनराज तातेड, सेठ रामनिवास गुप्ता, कविता मल्होत्रा, मधुवाला पांडे

कार्यकारी संपादक – प्रिय अभिषेक (प्रिंस अभिशेख अज्ञानी) ९८२६४२२८२० *प्रबंध सम्पादक– अशोक 'निर्मल'

मूल्य 10 रुपये/ विशेषांक 50/- वार्षिक 600/- पंजीकृत डाक 1000/- शुल्क फोन पे/जी पे 9424443401 QR CODE द्वारा या निर्दलीय (nirdaliya) के SBI मुख्य शाखा भोपाल खाता क्रमांक 30030303507 (IFSC code sbin0001308) अथवा निर्दलीय प्रकाशन के यूनियन बैंक (महाराण प्रताप नगर जोन-2 भोपाल) के खाता क्रं। 101211010000060 में जमा कर सकते हैं।

(**RNI regn.** DELHI/2006/19211) ईमेल nirdaliyadaily@gmail.com ई पेपर nirdaliya.com

भोपाल कार्यालय/संपर्क: निर्दलीय प्रकाशन-एफ११६/७ शिवाजी नगर, भोपाल ४६२०१६ दूरसंपर्क०७५५ -२७७२४०६

स्वामी,मुद्रक-प्रकाशक-संपादक-कैलाश श्रीवास्तव 'आदमी' (9424443401/8839797448) द्वारा निर्दलीस प्रेस, भोपाल से मुद्रित, राघव भवन सी 6/72 दयालपुर), दिल्ली 110 090 से प्रकाशित।

अनुभव की कूची से भरें कल्पनाओं के ऐसे रंग। किसी के अपमान में न बदले अभिव्यक्ति का ढंग।।

कैलाश आदमी

हर व्यक्ति अपना जीवन अपनी समझ और मान्यता के अनुसार जीता है। प्राय: वह आजाद होकर जीना चाहता है लेकिन जो व्यक्ति आजाद होकर जीने की चाह रखते हैं उन्हें उसके लिए उतना ही सामर्थ्यवान होना आवश्यक है और व्यक्ति की सामर्थ्य उसके विचारों एवं विचारों की अभिव्यक्ति के माध्यम से प्रकट होती है। ऐसा व्यक्ति अपने आजाद या स्वतंत्र विचारों के साथ जी सकता है फिर भले ही देश आजाद हो अथवा परतंत्र इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। हां, परतंत्र देश में बोलने की लिखने की और कहने की आजादी नहीं होती।

मेरे कहने का तात्पर्य है कि व्यक्ति के जीवन में आजादी का अत्यंत महत्वपूर्ण और विशेष स्थान होता है और इसमें सोचने की आजादी सर्वाधिक महत्व रखती है। यदि व्यक्ति वैचारिक दृष्टि से स्वतंत्र है और उसमें स्वतंत्रतापूर्वक जीने की चाह और सामर्थ्य है तो उसके व्यक्तिगत जीवन में आजादी बदस्तूर बनी रहती है। व्यक्ति के जीवन में बेहतर और कमतर बल्कि कभी-कभी बदतर विचारों का आवागमन होता रहता है किंतु यदि व्यक्ति स्वाभिमानी है और कमतर व बदतर विचारों को अपने मन-मस्तिष्क में नहीं आने देता तो उसका जीवन सार्थक हो जाता है और वह दूसरों के लिए भी आदर्श बन जाता है। यदि व्यक्ति पत्रकारिता अथवा साहित्य से जुड़ा है तो उसे आदर्श जीवन जीना सरल हो जाता है किंतु जो व्यक्ति राजनीति से जुड़े हैं वे प्राय: स्वतंत्र जीवन नहीं जी पाते बल्कि जिस दल से जुड़े होते हैं उसके कर्ताधर्ताओं या नियामकों का अंधानुशरण करना पड़ता है। यदि व्यक्ति किसी धर्म विशेष से जुड़ा है तो उसकी स्थिति और भी दयनीय हो जाती है और वह अपनी अभिव्यक्ति अर्थात वैचारिक स्वतंत्रता को कायम नहीं रख पाता बल्कि उसे संबंधित धर्म प्रमुखों, संतों, आचार्यों अथवा शंकराचार्यों द्वारा बताए गए मार्ग का ही अनुशरण करना पड़ता है। ऐसे व्यक्ति किसी नए काम के लिए जोखिम उठाने से डरते हैं और विचारों का स्वतंत्र रूप से प्रवाह भी प्रभावित होता है।

दलगत राजनीति अथवा किसी धर्म विशेष से जुड़े व्यक्तियों का मन भी शांत नहीं रह पाता। ऐसे व्यक्ति देखने में व व्यवहार में नम्र प्रतीत होते हैं किंतु सत्ताधारी दल अथवा बहुसंख्यकों के धर्म से जुड़े होने से उनका व्यक्तिगत आचरण शुद्ध नहीं रह पाता। वे चाहते हुए भी सत्याचरण से परे होने को बाध्य होते हैं। यह बात केवल किसी दलविशेष के कार्यकर्ता या पदाधिकारी पर ही लागू नहीं होती और किसी धर्म विशेष से जुड़े व्यक्ति पर भी लागू नहीं होती बल्कि ऐसा आमतौर पर होता रहता है।

जो व्यक्ति व्यक्तिगत जीवन में सत्य व अहिंसा से जुड़े रहकर अपने विचारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति के साथ उसका प्रभाव अपने जीते जी देखना चाहते हैं उनके लिए आवश्यक है कि वे अंधानुशरण अथवा अंधभक्ति से परे हटकर सोचें। कहने को पैगंबर ने इस्लाम की, ईसा मसीह ने ईसाई धर्म की नींव रखी किंतु इन धर्मों को मानने वाले लोग भी अपने मौलाना, मौलवियों, पादरियों आदि के अंधानुकरण के लिए ही बाध्य होते हैं और वे स्वतंत्रतापूर्वक नहीं सोच पाते, ना ही स्वतंत्रतापूर्वक अपने विचारों को प्रस्तुत या अभिव्यक्त कर पाते हैं।

जहां तक हिंदू धर्म का सवाल है इसे आजकल सनातन धर्म के रूप में प्रचारित किया जा रहा है। वैसे चाहे इसे हिंदू धर्म कहें अथवा सनातन धर्म इसका संस्थापक कौन था इस प्रश्न का उत्तर ना तो कोई संत दे पाता और ना ही कोई अन्य विद्वान, क्योंकि वैदिक काल में लिखे गए पौराणिक साहित्य में हिंदू शब्द का उल्लेख कहीं नहीं मिलता। कहा जाता है कि हिंदू शब्द का इस्तेमाल सिंधु घाटी सभ्यता के दौरान हुआ। तत्कालीन फारस या परसिया जिसे अब ईरान के रूप में जाना जाता है, से भारत आए लोगों ने सिंधु नदी के इस पार वाले इलाके में रहने वाले लोगों को हिंदू कहकर संबोधित किया और लौटकर कहा कि वे हिंद से आए हैं।

कहने को आदि शंकराचार्य ने सनातन धर्म में प्राण फूंकने का काम किया और उन्होंने चार मठों की स्थापना की जिससे आगे चलकर चार शंकराचार्य हुए तथा वे इन मठों को आज तक संभाल रहे हैं किंतु नकली शंकराचार्यों की अनगिनत संख्या और अनेक मठ हो जाने से

हिंदू/सनातन धर्म की प्रतिष्ठा धूमिल हुई है। इस धर्म के प्रवक्ता और अनुयायी इस बात का जवाब देने से कतराते हैं कि जब भारतवर्ष में हिंदू/सनातन धर्म के अलावा कोई अन्य धर्म प्रचलन में नहीं था तब जो ६०० से अधिक राजा-महाराजा रियासतों की बागडोर संभाले हुए थे उन्होंने इस्लाम धर्म का प्रवेश कैसे होने दिया? वस्तुतः मुट्ठीभर मुस्लिम आततायी भारत में घुसे लेकिन उन्हें राजा-महाराजाओं ने ही परस्पर प्रतिद्वंद्विता के कारण महत्व दिया ताकि एक शासक दूसरे शासक को परास्त कर सके अथवा नीचा दिखाने में कामयाब हो सके। कालांतर में इन घुसपैठियों ने अपनी शक्ति इतनी ज्यादा बढ़ा ली कि वे हिंदू राजा-महाराजाओं को परास्त कर स्वयं शासक बन बैठे। ईस्ट इंडिया कंपनी के माध्यम से कुछ ब्रिटिश व्यापारी भारत में आए और उन्होंने राजा-महाराजाओं के साथ ही नवाबों को परस्पर लड़ते देखा तो इसका लाभ उठाते हुए वे एक दिन इतने शक्तिशाली हो गए कि उन्होंने पूरे देश में अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया। गोवा में अवश्य पुर्तगाली घुसपैठिए शासक बने लेकिन अधिकांश रियासतों में नवाब और राजे-महाराजे ही सत्ता में बने रहे किंतु उन्हें ब्रिटिश आधिपत्य में ही रहना पड़ा।

कालांतर में एक अंग्रेज ने ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जैसे राजनीतिक संगठन की स्थापना की और देश के सभी प्रमुख नेता इस संगठन से जुड़ते गुए। आरंभ में इनका उद्देश्य ब्रिटिश शासकों की मदद करना था किंतु जब स्वतंत्र सोच-विचार के व्यक्ति कांग्रेस संगठन से जुड़ते गए तो उन्होंने शनैः-शनैः अपने अधिकार और मांगे प्रस्तुत करना शुरू कर दी। कांग्रेस से जुड़े नेताओं का तौर-तरीका पूरी तरह अहिंसक रहा तथा महात्मा गांधी द्वारा बागडोर संभाले जाने पर अहिंसा के साथ सत्याग्रह जैसा विचार जुड़ गया तो दूसरी ओर भगतसिंह और सुभाषचंद्र बोस जैसे क्रांतिकारी भी मैदान में आए। श्री बोस पहले कांग्रेस में ही रहे तथा उन्हें जबलपुर अधिवेशन में पार्टी का अध्यक्ष भी चुना गया किंतु जब गांधीजी ने सहयोग देने की बजाए असहयोग का ही रवैया अपनाया तो उन्होंने भी अहिंसक मार्ग का परित्याग कर आजाद हिंद फौज गठित कर ली। कुल मिलाकर कांग्रेस के अहिंसक आंदोलन और भगतसिंह-बोस जैसे क्रांतिकारियों के हिंसक आंदोलन के कारण ही अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा। संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि व्यक्ति वैचारिक स्वतंत्रता का पक्षधर है उसे सत्य का मार्ग अपनाना ही पड़ता है और इस स्थिति में हिंसा-अहिंसा जैसे तत्व गौण हो जाते हैं।

स्वाधीनता आंदोलन के समय क्रांग्रेस में ही दो समूह बन गए थे जिसमें से एक को गरम दल तो दूसरे समूह को नरम दल के रूप में जाना जाता रहा। गांधीजी दोनों समूहों के मध्य समन्वय बनाकर रखते थे। महात्मा गांधी ने सत्य-अहिंसा को जहां सुलभ-सफल जीवन का मूलमंत्र कहा, तो वहीं स्वामी विवेकानन्द ने संसार की युवाशक्ति को भविष्य का सूत्रधार माना। उन्होंने शिकागो में सर्वधर्म समभाव केंद्रित वैचारिक उद्‌बोधन देकर यह सिद्ध कर दिया कि वे किसी धर्म विशेष के अनुयायी ना होकर स्वतंत्र विचारक हैं। यही वजह है कि उनकी ना केवल ईसाई बल्कि इस्लाम व अन्य धर्मों को मानने वाले लोगों ने भी प्रशंसा की। विदुर तथा चाणक्य भी अपनी-अपनी स्वतंत्र नीतियों एवं विचारों के कारण विरोधियों में अपवाद जैसे रहे हैं। तेनालीराम तथा बीरबल आदि भी अपनी सटीक तथा उन्मुक्त व्याख्या के कारण इतिहास में चर्चित रहे हैं। इसी श्रृंखला में विश्वविख्यात विचारकों में रोमन कवि वर्जिलियस मारो, अमेरिकी राष्ट्रपति थॉमस जेफरसन, रूसी दार्शनिक तथा साहित्यकार फ्योदोर दोस्तवोस्की, लेबनॉन के दार्शनिक तथा चित्रकार खलील जिब्रान इत्यादि ने मानवोत्थान के प्रति अपने-अपने विचारों द्वारा ज्ञान का संप्रेपण किया। ये विचार ही हैं, जिन्होंने अज्ञान के अन्धकार में भटके मानव को ज्ञान का प्रकाश दिखाया तथा आगे भी दिखाते रहेंगे!

मानव जीवन की दैनन्दिनी में, अनेक ऐसे अवसर भी आते हैं जब वह अनियमितता का बोझ ढोते ढोते किंकर्तव्यविमूढ़-सा हो उठता है जिसका कारण, उसका स्वयं को नियंता मान बैठना है। चराचर जगत की समस्त जीवनधारा विधि तथा प्रकृति के अधीन है, जो निर्दिष्ट दिशा में बह रही है। मनुष्य इससे विरत नहीं हो सकता, वह ईश्वर को साकार या निराकार किसी भी रूप में मान भले ही ले परन्तु निसर्ग या प्रकृति सत्ता से इनकार करना सम्भव नहीं है। समय-समय पर व्यक्ति को किसी न किसी के मंतव्य अथवा सहायता की आवश्यकता होती है। ऐसे में कोई स्वतंत्र चेत्ता मित्र, सहायक अथवा कोई मनीषी उसका मार्गदर्शन कर दे, तो उसे दिशा मिल जाती है फिर भले ही यह मार्गदर्शन भौतिक रूप में हो या फिर आध्यात्मिक रूप में। इसी तारतम्य में, आध्यात्मिकता के मौलिक स्वरूप को आधार बनाते हुए देश-विदेश के अनेक विचारकों-मनीषियों ने गहन आत्म-मंथन तथा अनुभवों के उपरान्त अपने-अपने अमूल्य विचार मानव-कल्याण के उद्देश्य से मानव समाज के समक्ष रखे हैं। भारत में स्वाधीनता आंदोलन को दिशा ऐसे ही विचारकों और मनीषियों के माध्यम से मिली जिसके फलस्वरूप भारतवासी ब्रिटिश अधिनायकवादियों को देश से विदा कर सके। आंदोलन में भगतसिंह जैसे ऐसे क्रांतिकारी भी

थे जो कांग्रेस व महात्मा गांधी के नेतृत्व में चलाए जा रही अहिंसक आंदोलन से विलग रहे तथापि स्वाधीनता आंदोलन में उनके योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। स्वतंत्रता या स्वाधीनता शब्द से प्राय: सभी बुद्धिजीवी परिचित है। भारत में स्वाधीनता आंदोलन को जिन बुद्धिजीवियों ने आगे बढ़ाया उनमें अधिकांश वकील और पत्रकार थे। उनकी स्वतंत्र या मुखर अभिव्यक्ति से आंदोलन दिशाच्युत नहीं हो सका। अनेक बुद्धिजीवी जो कट्टरपंथी संप्रदायों, संगठनों, दलों आदि से प्रभावित होकर स्वाधीनता आंदोलन को विपरीत दिशा में ले जाना चाहते थे उन्हें जन समर्थन नहीं मिला।

ऐसे बुद्धिजीवियों में बलिराम केशव हेडगेवार, वीर सावरकर और श्यामाप्रसाद मुखर्जी जैसे नेताओं को गिनाया जा सकता है। श्री हेडगेवार तो कांग्रेस से जुड़े रहे लेकिन आगे चलकर वे उससे पृथक होकर केवल हिंदू कट्टरपंथ को बढ़ावा देने लगे तथा वर्ष १९२५ में उन्होंने राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ नामक जिस संगठन की स्थापना की थी, कांग्रेस छोड़कर उसी को स्थापित करने में जुट गए। दूसरी ओर वीर सावरकर हिंदुओं के ही दूसरे संगठन हिंदू महासभा को आगे बढ़ाने में मशगूल रहे। इसी तरह श्यामाप्रसाद मुखर्जी बंगाल में मुस्लिम लीगियों के साथ मिलकर सत्ताधारी समूह में शामिल हो गए। कालांतर में वीर सावरकर और महासभा ने यह मत व्यक्त किया कि हिंदू और मुसलमान दो अलग-अलग कौमें हैं तथा ये कभी साथ नहीं रह सकते। इस दृष्टि से उन्होंने पृथक हिंदू राष्ट्र का नारा दिया और जब उन्होंने आंदोलन छेड़ा तो उन्हें गिरफ्तार किया जाकर कालापानी की सजा दी गई किंतु उन्होंने ब्रिटिश सरकार से माफी मांग ली तथा प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान अंग्रेजों का साथ भी दिया।

वस्तुत: देश को आजादी मिली और संविधान सभा का गठन किया जाकर भारतीय संविधान भी बना लिया गया जो २६ जनवरी १९५० से प्रभावशील हो गया। इस संविधान में भारतीय नागरिकों को ६ मौलिक अधिकार दिए गए। ये अधिकार हैं- १. समानता का अधिकार (अनुच्छेद १४-१८) २. स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद १९-२२) ३. शोषण के विरूद्ध अधिकार (अनुच्छेद २३-२४) ४. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद २५-२८) ५. सांस्कृतिक एवं शिक्षा का अधिकार (अनुच्छेद २९-३०) और ६. संवैधानिक उपचार का अधिकार (अनुच्छेद ३२) ।

स्पष्ट है कि मौलिक अधिकारों के अंतर्गत संविधान के अनुच्छेद १९ से २२ में स्वतंत्रता विषयक विशेष प्रावधान किया गया है जिसके अंतर्गत देश के हर नागरिक को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी गई है किंतु इसका अर्थ यह नहीं निकाला जाना चाहिए कि इस अधिकार के तहत दूसरे नागरिकों को मिले अधिकारों को कुचला या छीना अथवा कमजोर किया जा सकता है या दबाया जा सकता है। इस अधिकार के इस्तेमाल या प्रयोग की सीमा वहीं खत्म हो जाती है जहां दूसरे व्यक्ति के अधिकार की शुरुआत होती है। अतएव कोई भी नागरिक वाणी स्वातंत्र्य या लेखन स्वातंत्र्य का इस्तेमाल दूसरे नागरिक या नागरिकों के ऐसे ही अधिकार के हनन हेतु नहीं कर सकता।

भारतीय संविधान की विशेषता यह है कि इसमें व्यक्ति के मौलिक कर्तव्यों को भी जोड़ दिया गया है। यद्यपि कर्तव्यों का समावेश संविधान लागू होने के २५ वर्ष बाद किया गया किंतु वर्ष १९७६ में जो ११ मौलिक कर्तव्य दर्शाए गए उनका पालन भी किया जाना चाहिए क्योंकि संविधान की दृष्टि में जितना महत्व मौलिक अधिकार का है उतना ही महत्व मौलिक कर्तव्य का है। जो लोग स्वतंत्रता के अधिकारों का दुरूपयोग कर मानव अधिकारों का हनन करते हैं उन्हें ऐसा कृत्य करने से रोकने हेतु देश में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का गठन किया गया है। यही नहीं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानव अधिकार आयोग का गठन कर उसका मुख्यालय जैनेवा में स्थापित किया है। भारत में कई राज्यों ने भी राज्य स्तर पर मानव अधिकार आयोग बनाए हैं। जहां कहीं मानव अधिकारों का उल्लंघन होता है वहां यदि इसकी शिकायत राज्य या राष्ट्रीय आयोग के समक्ष की जाती है और वहां भी कोई सुनवाई नहीं होती तो पीड़ित नागरिक या नागरिकों के समूह या संगठन को यह अधिकार है कि वह अपनी आवाज जैनेवा स्थित अंतरराष्ट्रीय मानव आयोग तक पहुंचाए।

वास्तव में देखा जाए तो स्वतंत्रता की सबसे बड़ी शक्ति अभिव्यक्ति में निहित है। अतएव अभिव्यक्ति के समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि एक व्यक्ति की अभिव्यक्ति दूसरे व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की अभिव्यक्ति में बाधक ना बने। इस दृष्टि से समाचार पत्र-पत्रिकाओं और समाज माध्यमों की विशिष्ट भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता। कृत्रिम बुद्धि के नए दौर में समाचार पत्र-पत्रिकाओं और समाज माध्यमों से जुड़े नागरिकों की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। इस दृष्टि से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का लाभ उठाते समय प्रत्येक नागरिक को दूसरे नागरिक की वैसी ही स्वतंत्रता को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।

अंत में मेरी दो काव्य पंक्तियां

अनुभव की कूची से भरें कल्पनाओं के ऐसे रंग।
किसी के अपमान में न बदले अभिव्यक्ति का ढंग॥

शीला श्रीवास्तव

शांतिपूर्ण विरोध अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्वपूर्ण अंग

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अर्थ है किसी भी व्यक्ति को बिना किसी डर के अपने विचारों को, मतों को, विश्वास और सूचनाओं को मौखिक, लिखित, कलात्मक या किसी अन्य माध्यम से स्वतंत्र रूप से व्यक्त करना और प्राप्त करने का अधिकार। इसमें सरकार की आलोचना करना, शांति पूर्वक विरोध करना प्रदर्शन करना आता है!

यह एक लोकतांत्रिक समाज की नींव है, जो नागरिकों को सरकार की आलोचना करने, और सार्वजनिक मुद्दों पर चर्चा करने का अधिकार देती है। इस पर राष्ट्रीय सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था जैसे आधारों पर इस पर उचित प्रतिबंध भी लगाया जा सकता है। यह व्यक्तियों को बिना सेंसर के अपने विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता तो देती है, राष्ट्रद्रोह जैसे विचारों का खंडन करना भी अति आवश्यक होता है।

हमारा भारत वर्ष एक महान देश है जिसमें सब धर्मों का आद सम्मान किया जाता है। हमारे संविधान में सबको अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी गई है! परंतु इसका यह मतलब नहीं है कि आपकी अभिव्यक्ति किसी के मान सम्मान पर प्रहार करें, देश का परिवार का वातावरण विनाशकारी बना ले।

अधिकतर देखने में आता है की कुछ लोग इसका गलत अर्थ लगा लेते हैं और मर्यादाओं का नैतिक पतन होने लगता है, कारण शिक्षा की कमी भी है जिसके कारण बहकावे में जनता आ जाती हैं। आजकल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता ने उद्दंडिता का रूप ले लिया है। देश में धर्म को लेकर, जाति को लेकर, शिक्षा को लेकर, युवा वर्ग में रोजगारी को लेकर आंदोलनों का होना आए दिन देखा जाता है। जरूरी यह है कि जनता को अभिव्यक्ति का सही अर्थ समझाया जाए राज्य को राष्ट्र को मर्यादाओं और नैतिक पतन से बचाने के लिए।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता किसी भी राष्ट्र के उन्नति के लिए महत्वपूर्ण स्तंभ माना जाता है। कहते हैं- निंदक नियरे राखिए आंगन कुटी छवाय।

इससे हम अपने व्यक्तित्व को तानाशाह होने से बचा लेते हैं जो कि हमारे राष्ट्र के हित में होता है! जब तक अपने अंदर बुराइयों का पता नहीं चलेगा जब तक सुधार नहीं किया जा सकता। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के ज़रिए अपने अंदर की राष्ट्र की राज्य की कमियों का पता चलता है। सुधार करके एक आदर्श व्यक्तित्व और राष्ट्र का जन्म हो जाता है; जिस तरह किसी बीमारी को ठीक करने के लिए दवा की आवश्यकता होती है उसी प्रकार यह एक औषधि मात्र है।

देखा जाता है चित्रों के माध्यम से दीवारों पर तरह-तरह के चित्र बनाकर विरोध प्रदर्शन करते हैं; परंतु उसमें फूहड़ता नहीं होनी चाहिए, कला का माध्यम गौरवपूर्ण होना चाहिए जो कि हमारी संस्कृति पर प्रहार ना करता हो। यह सोचना चाहिए यह वह पारस है जो लोहे को कंचन बना देता है। इसका होना अत्यंत आवश्यक है परंतु इसका तोल- मोलकर प्रयोग किया जाना चाहिए। -भोपाल

रच रहा है कोई साजिशें

- मोनिका डागा 'आनंद'

न जाने ज़हर के बीज कब खत्म होंगे,
हम अपने ही घर में सुरक्षित कब होंगे,
कब खत्म होंगी ये खौफ़नाक रंजिशें,
कोई कहीं न कहीं रच रहा है साजिशें ।
लूट लेते हैं सुकून सारा ऐसे ही समाचार,
पल में छीन ली जाती आनंद रसधार,
अपने घर लौट पाएं हम सुरक्षित इस बार,
हर आदमी तो है बस परेशान व लाचार ।
इंसान ही इंसानों के बन बैठे हैं दुश्मन,
चीख रही मानवता कैसा बेतुका ये टशन,
खोखली हुई भावनाएं, मना रहा कोई जश्न,
जीवन है कीमती रह गया बस एक प्रश्न ।
बस किताबी हो गया लगता है भाईचारे,
हम किसी न किसी रूप में फिर हैं हारे,
दुष्टों द्वारा तोड़ी जा रहीं प्रेम की दीवार,
न जाने कब थमेंगी ये हिंसा की तलवार ।
आस्तीन के सांप देशद्रोही वो दग़ाबाज़,
हादसों को अंजाम देते हैं वे धोखेबाज़,
बिलख रहा कोई अपना जल रहे अंगारे,
तड़प रहा है फिर कोई घूम रहे हत्यारे ।
बड़ी मात्रा में होता है जगह-जगह नुक़सान,
कितने घर हो जाते सुनसान लहुलुहान,
समझने वाला है क्या कोई से दुरूहता,
ये समस्या बन चुकी हमारी विवशता । -चेन्नई

हमारा मौलिक अधिकार है अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

रति दिनेश चौबे

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक मौलिक अधिकार है जो हमें अपने विचारों, भावनाओं और विचारों को व्यक्त करने की अनुमति देता है। यह अधिकार हमें अपने विचारों को साझा करने, दूसरों के विचारों को सुनने और समझने की शक्ति प्रदान करता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भारत के संविधान में मौलिक अधिकार के रूप में दर्ज है जिसके अंतर्गत ना केवल व्यक्ति को बल्कि समाचार माध्यमों एवं संस्थाओं को भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्राप्त है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्व-

१. विचारों का आदान-प्रदान- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हमें अपने विचारों को साझा करने और दूसरों के विचारों को सुनने की अनुमति देती है, जिससे विचारों का आदान-प्रदान होता है।

२. सत्य की खोज- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हमें सत्य की खोज करने और उसे व्यक्त करने की अनुमति देती है।

३. समाज में परिवर्तन- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता समाज में परिवर्तन लाने का एक शक्तिशाली साधन है।

४. व्यक्तिगत विकास- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हमें अपने विचारों और भावनाओं को व्यक्त करने की अनुमति देती है, जिससे व्यक्तिगत विकास होता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जहां व्यक्ति और संस्थाओं को विशेष अधिकार देती है वहीं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के कई खतरे भी विद्यमान हैं-

१. सेंसरशिप- सरकार या अन्य शक्तिशाली संस्थाओं द्वारा सेंसरशिप अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को खतरा पहुंचा सकती है।

२. भय और धमकी- भय और धमकी से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को खतरा पहुंच सकता है।

३.समाज माध्यमों (सोशल मीडिया) का दुरुपयोग- सोशल मीडिया का दुरुपयोग अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को खतरा पहुंचा सकता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक मौलिक अधिकार है जो हमें अपने विचारों, भावनाओं और विचारों को व्यक्त करने की अनुमति देता है। हमें इस अधिकार की रक्षा करनी चाहिए और इसका उपयोग जिम्मेदारी से करना चाहिए।

-नागपुर, महाराष्ट्र

सरल होना दुरूह क्यों?

डॉ सुनीता त्रिपाठी

प्रकृति में घटित कुछ घटनाएं...
सब कुछ कितना सहज,
कितना निष्कलंकित होता है—
कि जब यह घटित होता है,
तो इसके होने का
और निरंतर बहते रहने का
आभास भी नहीं होता।
प्रत्येक प्रभात—
बिना किसी उद्घोषणा के
सूर्य का उदित हो जाना,
और मौन में ही
फूलों का खिलकर रंगीन हो जाना
मंद बयार के शीतल स्पर्श भर से
नीर से भरे मेघों का अचानक उमड़ पड़ना
और प्रेम में विकल होकर रिक्त हो जाना
श्वासों का निरंतर आना-जाना,
और तंद्रा घिरते ही
पलकों का अनायास
धीमे से बन्द हो जाना और बन्द नेत्रों में
प्रियतम की छवि का अनायस ही
प्रकट हो जाना।
सब कुछ कितना स्वाभाविक,
कितना अविकल!
सरल होना तो सदैव से सहज ही था—
पर वही सरलता जीकर दिखाना
इतना दुरूह क्यों हो जाता है?

- लखनऊ

अवसरवादिता में ना बदलने दें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

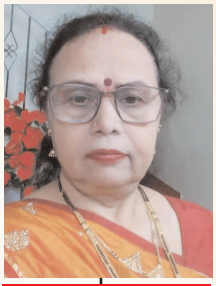

शशिप्रभा शाक्य

आज के इस वैचारिक युग में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक महत्वपूर्ण विषय है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अर्थ व्यक्ति को अपने विचार,राय और भावनाओं को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने का अधिकार है।

यह अधिकार लोकतंत्र का महत्वपूर्ण भाग है और इसे संविधान द्वारा संरक्षित भी किया गया है लेकिन इस स्वतंत्रता पर कुछ समुचित प्रतिबंध भी लगाए जा सकते हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इसका दुरुपयोग ना हो। जैसे किसी के सम्मान को ठेस पहुँचाना, राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरे में डालना, यह समाज में किसी भी तरह की हिंसा भड़काना, यह ऐसे कार्य हैं जिन पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतंत्र और व्यक्तित्व के विकास के लिए जरूरी है लेकिन यह अधिकार असीमित नहीं है।

अपने विचारों, भावनाओं विश्वासों और इच्छाओं को, शब्दों कार्यों कला(जैसे लेखन नृत्य, चित्रकला) या हाव-भाव के माध्यम से प्रकट करना या उन्हें वास्तविकता में बदलना ही अभिव्यक्ति है। यह विचारों को मूर्त रूप देने, समझाने या किसी की भावना को दर्शाने की क्रिया है जो चेहरे के भावों से लेकर गहरी कलात्मक प्रस्तुति तक हो सकती है।

विचारों का प्रकृटीकरण अपने आंतरिक विचारों और भावनाओं को बाहरी दुनिया तक पहुँचाना, अपनी कला (कविता,संगीत, नृत्य) के माध्यम से अमूर्त भावनाओं या विचारों को व्यक्त करना, विचारों और इरादों को केंद्रित करके भौतिक वास्तविकता में बदलने की प्रक्रिया है जो शब्दांकन/ शैली अभिव्यक्ति की कोमलता किसी बात को कहने का तरीका या रूप, संकेत चेहरे के भाव या आवाज में झलकने वाली भावना, कविताओं के माध्यम से भावनाएँ व्यक्त करना आदि हैं।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक लोकतांत्रिक और बहुलवादी समाज की नींव में से एक है। इसका मूल मंत्र सभी के लिए सटीक, विश्वसनीय और समय पर जानकारी तक पहुँच,जो सूचित जनभागीदारी के लिए एक प्रमुख पूर्वापेक्षा है। सूचना की खोज सत्यापन और वितरण में मीडिया और पत्रकारों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

प्रत्येक समाज में कुछ स्थापित नियम होते हैं समय के साथ इन नियमों में परिवर्तन आवश्यक है। अगर समाज इस नियमों की जड़ता में बँधा रहता है तो इससे समाज का विकास बाधित हो जाता है।

समाज में नए विचारों का जन्म तात्कालिक समाज के स्वीकृत मानदंडो से असहमति के आधार पर ही होता है। यदि प्रत्येक व्यक्ति पुराने नियमों और विचारों का ही अनुसरण करता रहेगा तो समाज में नवाचारों का अभाव उत्पन्न हो जाएगा। उदाहरणतः नए विचारों और धार्मिक प्रथाओं का विकास तभी हुआ है जब पुरानी प्रथाओं से असहमति व्यक्त की गई।

समाज की प्रगति का आधार उसे समझ में उपस्थित नवाचार की प्रवृति होती है। समाज में नवाचार और जिज्ञासा में ह्रास इसकी जड़ता को प्रतिबिंबित करता है। जिज्ञासा के अभाव में समाज का विकास रुक जाता है और वह तात्कालिक समाजों से पीछे रह जाता है।

समय के साथ न चलने की स्थिति एक दिन भयावह रूप ले लेती है और इस प्रकार का असंतोष विध्वंसक होता है जिससे समाज को दीर्घकालिक हानि उठानी पड़ती है।

देश के बड़े क्षेत्र में पहले सामाजिक असंतोष कहीं ना कहीं इन राजनीतिक व्यवस्थाओं में उनके विचारों के प्रतिभाग का अभाव है।

भारत जैसे सामासिक संस्कृति वाले देश में सभी नागरिकों जैसे आस्तिक,नास्तिक और आध्यात्मिक को अभिव्यक्ति का अधिकार है। उनके विचारों को सुनना लोकतंत्र का परम कर्तव्य है उनके विचारों में से समाज के लिए अप्रासंगिक विचारों को निकाल देना देश की शासन व्यवस्था का उत्तरदायित्व है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का आज के समय में बहुत ही दुरुपयोग होते हुए दिखाई दे रहा है। आज अवसरवादिता में क्षमा वादिता का प्रचलन बहुत अधिक हो रहा है। किसी के भी प्रति आपके मन में जो आए वह कह दो और जैसे ही अवसर मिले क्षमा माँग लो, इसका बहुत चलन सा हो गया है जो कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए सही नहीं है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होना चाहिए,किसी के प्रति व्यक्तिगत प्रहार नहीं होना चाहिए, तभी शुद्ध अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कायम रह सकती है।

– अवधपुरी, भोपाल

जीवंत लोकतंत्र की आत्मा है अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

डॉ. कविता मल्होत्रा

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता किसी भी जीवंत लोकतंत्र की आत्मा होती है।भारतीय संविधान का अनुच्छेद १९ (१) हमें अपने विचार प्रकट करने का अधिकार देता है, लेकिन यह अधिकार बेलगाम नहीं है।

राष्ट्र निर्माण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उत्तरदायित्व लोकतंत्र में केवल एक अधिकार नहीं, बल्कि राष्ट्र निर्माण का एक सशक्त उपकरण है। राष्ट्र की प्रगति इस बात पर निर्भर करती है कि उसकी विभिन्न पीढ़ियाँ अपने विचारों का आदान-प्रदान कितनी परिपक्वता और ज़िम्मेदारी के साथ करती हैं।

वर्तमान समय में, सोशल मीडिया के दौर में, युवा पीढ़ी अक्सर स्वतंत्रता और उच्छृंखलता के बीच की रेखा को भूल जाती है लेकिन जब समाज के मार्गदर्शक कहे जाने वाले वरिष्ठ नागरिक इस अधिकार का दुरूपयोग करते हैं, तो समस्या और भी गंभीर हो जाती है।

बुजुर्ग समाज की नींव और अनुभवों की पाठशाला होते हैं। यदि वे ही कटुता, असत्य सूचनाओं या संकीर्ण विचारधारा को फैलाने के लिए अपनी वाणी का प्रयोग करेंगे, तो भावी पीढ़ी को संयम और सभ्यता का पाठ कौन पढ़ाएगा?

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अर्थ केवल बोलना नहीं, बल्कि सार्थक बोलना है। जब कोई भी उच्च शिक्षित या सत्ताधारी व्यक्ति अपनी गरिमा खोकर अभिव्यक्ति के अधिकार का गलत प्रयोग करता है तो, अंजाने में समाज में यह संदेश फैलता है कि मर्यादा का उल्लंघन स्वीकार्य है। इससे समाज के नैतिक ढाँचे का पतन होता है।

हमारे संवादों का आधार सदैव सत्य और प्रमाणित होना चाहिए, न कि सुनी-सुनाई बातों या अफवाहों पर। आलोचनात्मक विश्लेषण के समय भी भाषा संयमित और शालीन होनी चाहिए। अभिव्यक्ति ऐसी होनी चाहिए जो समाज को जोड़े, न कि धर्म, जाति या वैचारिक मतभेदों के आधार पर नफरत फैलाए। व्यक्तिगत आक्षेप से बचना अनिवार्य है।

विरोध केवल विरोध के लिए नहीं होना चाहिए, बल्कि उसमें सुधार की गुंजाइश और सकारात्मक विकल्प मौजूद होने चाहिए।स्वतंत्रता के साथ उत्तरदायित्व भी होना आवश्यक है ताकि समाज में शांति और परस्पर सौहार्द कायम रहे।

जब वरिष्ठ पीढ़ी अपने शब्दों और विचारों से अपने ज्ञान और सामंजस्य के अनुभवों की विरासत भावी पीढ़ी को सौंपेगी, तभी आने वाली पीढ़ी यह सीख पाएगी कि अपनी बात को, बिना किसी को आहत किए मजबूती के साथ कैसे रखा जाना चाहिये। अनुभव और ऊर्जा का समन्वय भाषा को बेहतर बनाता है।

राष्ट्र निर्माण में वरिष्ठ पीढ़ी की भूमिका एक संरक्षक की होती है। उसके पास दशकों का अनुभव और धैर्य होता है। उन्हें अपनी अभिव्यक्ति का प्रयोग समाज में संचित ज्ञान को साझा करने, ऐतिहासिक ग़लतियों के प्रति सचेत करने और सांस्कृतिक मूल्यों को सहेजने के लिए करना चाहिए। जब बुजुर्ग संतुलित और तर्कपूर्ण विमर्श करते हैं, तो वे समाज के लिए एक नैतिक दिशा सूचक का कार्य करते हैं।

वरिष्ठ और ज़िम्मेदार नागरिकों के उचित मार्गदर्शन में राष्ट्र की ऊर्जा - युवा पीढ़ी, नवाचारों, डिजिटल माध्यमों के उपयोग की रचनात्मक आलोचना, सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध आवाज़ उठाने और नए भारत का दृष्टिकोण साझा करने के लिए, अपनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का सार्थक उपयोग कर पाएगी।

सार्थक अभिव्यक्ति का आधार है संविधान के प्रति निष्ठा जो राष्ट्र निर्माण के लिए अभिव्यक्ति का अनिवार्य स्तंभ है। अभिव्यक्ति ऐसी होनी चाहिए जो देश की अखंडता और एकता को मजबूत करे। परस्पर संवादों में घृणा और अफवाहों के स्थान पर तथ्यों और तर्कों को प्रधानता देनी चाहिए।

लोकतंत्र तभी फलता-फूलता है जब हम दूसरों के विचारों को बिना हिंसक हुए सुनने का धैर्य रखें। जब पुरानी पीढ़ी का विवेक और

नई पीढ़ी का उत्साह मिलकर सार्थक संवाद करते हैं, तभी राष्ट्र प्रगति के पथ पर अग्रसर होता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का असली अर्थ स्वंय को व्यक्त करने के साथ-साथ राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों को समझना भी है। राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक सेतु का कार्य करती है, जो अनुभवों को भविष्य की संभावनाओं से जोड़ती है। इस यात्रा में शिक्षा आधार प्रदान करती है और सोशल मीडिया माध्यम की भूमिका निभाता है।

अभिव्यक्ति तभी सार्थक होती है जब वह शिक्षा के प्रकाश से उपजी हो।शिक्षा हमें केवल साक्षर नहीं बनाती, बल्कि यह सिखाती है कि हम सूचना और ज्ञान के बीच अंतर कैसे करें। एक शिक्षित नागरिक जानता है कि स्वतंत्रता का अर्थ अराजकता नहीं है। जब शिक्षा के माध्यम से तार्किक सोच विकसित होती है, तो नागरिक राष्ट्र के सामने मौजूद चुनौतियों पर स्वस्थ चर्चा कर पाते हैं और सार्थक समाधान दे पाते हैं।

आज के युग में सोशल मीडिया अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त मंच है। जहाँ इसने आम आदमी को अपनी आवाज़ उठाने की शक्ति दी है, वहीं फ़ेक न्यूज़ और हेट स्पीच के रूप में चुनौतियाँ भी पेश की हैं। युवाओं के लिए सोशल मीडिया केवल मनोरंजन का साधन न होकर राष्ट्र की समस्याओं पर जागरूकता फैलाने का मंच होना चाहिए, ताकि डिजिटल स्पेस में संवाद का स्तर ऊँचा बना रहे।

राष्ट्र निर्माण तब सफल होता है जब अभिव्यक्ति स्व से ऊपर उठकर सर्व के कल्याण के लिए हो।यदि सोशल मीडिया पर होने वाली बहसें व्यक्तिगत आरोपों की बजाय विकास, पर्यावरण और सामाजिक न्याय पर केंद्रित हो, तो यही स्वतंत्रता राष्ट्र के लिए वरदान बन जाती है। शिक्षित मस्तिष्क और जागरूक चेतना से किया गया मर्यादित डिजिटल व्यवहार ही वह नींव है जिस पर सशक्त भारत का निर्माण संभव है। अभिव्यक्ति की आज़ादी का सम्मान तभी है जब हम अपनी बातों से समाज में ज़हर नहीं, बल्कि समाधान घोलें।

- नई दिल्ली

अभिव्यक्ति का अर्थ विचारों की पहुंच

चंचलिका शर्मा

अभिव्यक्ति का सामान्य अर्थ है अपने विचारों, एहसासों मतों को दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाना। अपने अभिव्यक्ति को कोई कवि या लेखक अपनी कविता अथवा कहानी, लेख द्वारा समझा सकता है। उसी तरह कोई संगीत प्रेमी अपने सुख दु:ख के भाव को अपने गीतों के माध्यम से समझा सकता है। अपनी खुशी / प्रसन्नता को ज़ाहिर करने का सबसे अच्छा उदाहरण है चेहरे पर खूबसूरत मुस्कान।

किसी मुद्दे पर अगर बातचीत चल रही हो तो कोई भी शब्दों के माध्यम से बोलकर व्यक्त कर सकता है। कहने का अर्थ है कि सभी को अधिकार है अपनी बात को औरों के समक्ष रखने का ताकि पूरी तरह सम्प्रेषण हो सके।

कई बार चित्रकार अपने मनोभाव को चित्र के माध्यम से व्यक्त कर सकता है। यह भी अभिव्यक्ति का एक रुप है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर व्यक्ति का मौलिक अधिकार है, वह बिना डरे अपनी बात को लोगों के समक्ष रख सकता है, क्योंकि उसको यह अनुमति दी जाती है, जैसे - उसकी कविता में एहसासों की गहरी अभिव्यक्ति है। दर असल बिना किसी सज़ा के अपनी बात को कहना अथवा रखना अभिव्यक्ति की आज़ादी है।

न्याय शास्त्र में अभियूक्त अपने पक्ष में न्यायाधीश के सम्मुख अभिव्यक्ति रखने का हक़ रखता है। दंड विधि में अभियुक्त को मुलज़िम भी कहा जाता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से अभियुक्त अपने मनोभाव को बताने का पूरा अधिकार है। अर्थात अभिव्यक्ति सार्वभौमिक तरीके से रखने का अधिकार है लोगों को।

अभिनय के परदे पर अभिनेता / अभिनेत्री , अन्य सभी कलाकार को चित्रपट पर अपने अपने भाव को अभिनय के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति को व्यक्त करने का पूरा हक़ होता है। इतना ही नहीं उनके अभिव्यक्ति का (एहसासों का प्रभाव) दर्शकों पर इतना अधिक पड़ता है कि उनके रोने से दर्शक रो पड़ते हैं और उनके हंसने पर दर्शक ठहाके लगाते हैं।

अभिव्यक्ति के बिना मानव जीवन अधूरा, बेमानी, मूक सा रहता है कुछ एहसास, दर्शाये बिना मानव असहाय, बेबस, लाचार सा लगता है...

-बड़ौदरा, गुजरात

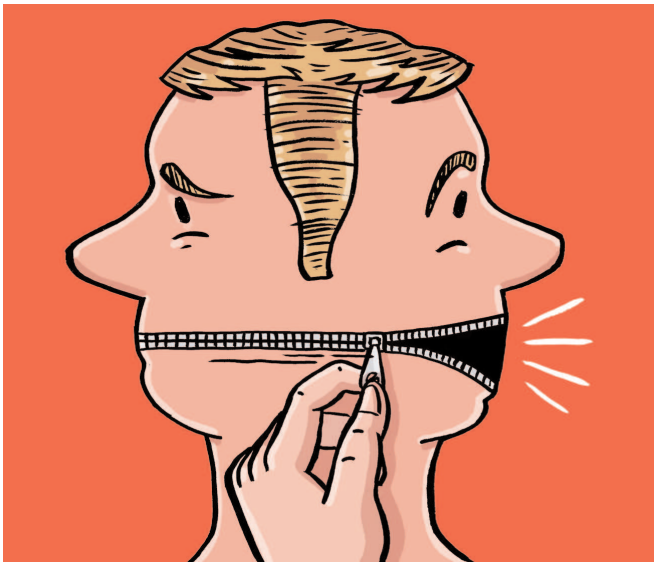

वाणी स्वातंत्र्य

वाणी नित्या

वाणी की स्वतन्त्रता का अर्थ अति साधारण होते हुए भी बहुत गूढ़ है , आपको अपनी बात रखने की स्वतंत्रता अवश्य प्राप्त है लेकिन विचार कर, सोच समझ कर बोलना ही उत्तम वक्ता एवं वाणी स्वातंत्र्य का सही अर्थ में न्याय कर पाना है।

मनुष्य स्वतन्त्रता प्रिय प्राणी है यह तो सब जानते हैं किन्तु अपनी बोली की स्वतन्त्रता तभी तक मान्य है जब तक आपके वचन से किसी दूसरे की भावनाओ को ठेस न पहुंचे। इस बात का समुचित ध्यान रखना ही व्यक्ति की वाणी की महत्ता को बढ़ाता है ।

संत कबीर के शब्दों में कितनी अच्छी सीख भरी है जो वाणी स्वातंत्र्य का उचित रूप में व्याख्या कर पाती है, जैसे

ऐसी वाणी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहुं शीतल होय।।

अर्थात अपनी बोली आप इतना शीतल रखिये कि मन भाव में खो जाए , दूसरों को भी शीतलता दे और अपना मन भी खुश रहे, शीतल रहे।

आइये एक और उनकी वाणी सुनते हैं-

बोली एक अनमोल है, जो कोई बोलै जानि।
हिये तराजू तोलकर, तब मुख बाहर आनि ।।

अर्थात वचन इतना अनमोल है कि इसका प्रयोग बहुत सोच समझ कर करिये। अपने ह्रदय में तोलकर अर्थात जो भाव जो वचन अपने लिए प्रिय न हो उस वचन को मत कहिये, मुख से बाहर मत निकालिये किन्तु हम कितना समझ पाते है कदाचित नहीं। हम बिना सोचे समझे भाव अतिरेक में शब्दों का प्रयोग करते हैं जो कि बिलकुल अनुचित है । पश्चात इसके परिणाम भी अच्छे नहीं होते फिर भी हम लोग सोच विचार कर नहीं बोलते, समझ नहीं पाते स्वतन्त्रता की सीमा।

इसका बस एक ही कारण है अपने भीतर अनुशासन की कमी। यदि हम अपने लिए औरों के लिए सम्मानजनक वचन कहेंगे और वचन यदि सकारात्मक हो तो जैसे सोने पर सुहागा।

जब भी बोले,उचित बोले,कम बोले और सम्मानजनक बोलें। अपने भीतर इस वचन की स्वतंत्रता को अनुशासित रूप में उपयोग करें तो हमारा जीवन बहुत हद तक आसान और सुखमय होगा, ऐसा मेरा विचार है।

-काठमांडू

कमरों में बंद वैचारिक एहसास

रमा निगम

परिवार में
परिजनों के दरमियाँ
स्नेह लफ़्ज़ों का
मोहताज नहीं होता,
वह तो
ख़ामोशी की
ज़बान में भी
बखूबी बयान
हो जाता है।
परिवार की एकता
हमें यह सबक़ सिखाती है कि
सिर्फ़ जिस्म का साथ काफ़ी नहीं,
रूह का रिश्ता भी ज़रूरी होता है।
ज़रूरी होता है
एक-दूसरे के साथ जीना,
और उससे भी ज़्यादा ज़रूरी होता है
एक-दूसरे की
ख़ामोशी को पढ़ लेना
स्नेहपूर्ण एकता में
माँ का आँचल होता है,
पिता का यक़ीन,
भाई-बहन का अपनापन,
बुआ-फूफा, चाचा-ताऊ,
मामा-मामी का साया
और इन सबको
एक मज़बूत डोर में बाँधते
दादा-दादी का वजूद।
कहीं पढ़ी थी मैंने
स्नेहपूर्ण एकता की परिभाषा—
संयुक्त परिवार।
आज वह परिभाषा
सिमट कर रह गई है
पति-पत्नी और बच्चों
के दायरे में।
तो कोई मुझे समझाए—
यह कैसी स्नेहपूर्ण एकता है
जहाँ रिश्ते तो साथ रहते हैं,
मगर वैचारिक एहसास
अलग-अलग कमरों
में बंद हो जाते हैं।

-बंगलुरू, (वरिष्ठ साहित्यकार एवं पत्रकार)

संवैधानिक उपहार है- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

इन्दिरा किसलय

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपहार लोकतंत्र के लिए सचेतक की भूमिका में है। आशय यही कि स्वतंत्रता समता और बंधुत्व - इन स्थापनाओं पर आँच न आने पाए। महात्मा गांधी ने माना कि यदि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता न हो तो सत्य भी गूँगा बन जाता है।

यह स्वतंत्रता हमें अहिंसा और सांस्कृतिक मर्यादाओं के साथ मिली है। अलोकतांत्रिक तरीका किसी भी सूरत में स्वीकार्य नहीं है। लोक जीवन के हर क्षेत्र में, हर नागरिक को यह बिना किसी भेदभाव के मिली है ताकि वह अन्याय के विरोध में अपनी आवाज़ दर्ज कर सके। शर्त इतनी सी है कि संवेदनात्मकता और राष्ट्र धर्म की उपेक्षा न हो। उसका स्वरूप अराजक न हो।

बेलगाम अभिव्यक्ति न समाज के हित में है न देश के। मीडिया, सियासत, सम्प्रदाय, कला, साहित्य, फिल्म सभी क्षेत्रों में यह मूल्यहीनता का चरम छू रही है। बाड़ ही बिंदास होकर खेत खा रही है। टेक्नालॉजी के अकल्पनीय विकास ने इससे मानवीय संवेदनाएं, सांस्कृतिक मूल्य छीन लिए हैं।

न्यूज़ चैनलों पर होने वाले पैनल डिस्कशन अमर्यादित नीति हीन एवं आक्रामक हो गये हैं। असहमति एवं, तंत्र पूजा के चलते मार पीट गाली गलौज जूतम पैजार एवं धक्का मुक्की आम बात हो गई है। यह राष्ट्र के मानसिक स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ है। इस आजादी को पूँजीवादी, अधिनायकतंत्री ग्रहण लग चुका है।धनपति संचार, प्रचार, प्रसार माध्यमों पर कुंडली मारे बैठे हैं।जिनके लिए प्रजातन्त्र अपना उल्लू सीधा करने का जरिया है। पत्रकारिता जिन्स की तरह बिकाऊ हो गई है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (फ्रीडम ऑफ स्पीच) का सबसे घटिया भद्दा अश्लील इस्तेमाल कृत्रिम बुद्धि (ए .आई.) की परम कृपा से सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर हो रहा है। तंत्र की इसमें भागीदारी विस्मित करती है। संसद में इसके प्रमाण समय समय पर मिलते रहते हैं।

साहित्य के इलाके में ताजातरीन बिलासपुर के गुरु घासीदास विश्वविद्यालय में होने वाली एक घटना ने तहलका मचा दिया है। प्रसिद्ध कथाकार मनोज रूपड़ा का कुलपति महोदय आलोक चक्रवाल ने जो अपमान किया उससे समूची साहित्यिक बिरादरी आहत है। यह कृतिकार की अस्मिता को तार तार करनेवाली घटना है।

इस स्वतंत्रता का सार्थक इस्तेमाल किया ज्ञानपीठ विजेता महाश्वेता देवी ने न केवल अपनी रचनाओं के माध्यम से वरन नंदीग्राम की सड़कों पर आवाज़ बुलंद कर के। कलम ही उनका हथियार था। वे हमारे बीच एक दृष्टान्त की तरह हैं।

तंत्र से असहमत हुआ जा सकता है ,अगर उसकी गतिविधियां अलोकतांत्रिक नजर आ रही हों। कितने ही साहित्यकारों ने पुरस्कार वापस किये थे। उन्हें पुरस्कार वापसी गैंग कहा गया। प्रतिगामी शक्तियों से रचनाकार इस तरह भी समर करते हैं। १३ माह चलनेवाला किसान आन्दोलन भी शान्तिपूर्ण असहयोग की आवाज़ थी।

प्रतिपाद्य विषय के परिप्रेक्ष्य में एक वाकया याद आ गया। किसी समारोह में पं नेहरूजी लड़खड़ाए तो दिनकरजी ने थाम लिया यह कहते हुये कि -- जब कभी सियासत लड़खड़ाती है साहित्य उसे थाम लेता है। आशय था दिशा प्रदान करता है। प्रेमचंद ,पश, नागार्जुन, दुष्यन्तकुमार, जैसे अनेक रचनाकारों ने यथासमय कलम के जरिए सत्ता को आईना दिखाया। वे अभिव्यक्ति के सही मायने जानते थे।

प्रख्यात कार्टूनिस्ट आर के लक्ष्मण ने पं नेहरूजी को गधे के रूप में चित्रित किया। अगले दिन पंडितजी ने उन्हें आमंत्रित किया ये कहते हुये कि--इस गधे के साथ चाय पीना पसंद नहीं करोगे! और ये भी कहा कि मुझे कभी बख्शना मत।

वर्तमान में लगभग हर वक्तव्य, सृजन, सत्य और सार्थक विरोध को द्रोह करार दिया जा रहा है। बलात्कारियों के समर्थन में जुलूस निकलते देखे गये हैं। अभिव्यक्ति का दूसरा नाम बदला और भड़ास हो गया है।

समय साक्षी है ताजा दौर में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मरणासन्न है।रचनाकारों को अघोषित सियासी दबाओं और वैचारिक संकीर्णताओं का सामना करना पड़ रहा है। अन्याय के विरोध में उनका निर्भीक कदम किसी भी अप्रिय परिणति तक पहुँच सकता है। यह रचनात्मकता को चुनौती है। गूँगे, ढोंगी या मिथ्याभाषियों को सराहा जा रहा है। वे सारी सुविधाएं पाने के हकदार हैं। बाजारवाद की गिरफ्त में है स्वतंत्रता।

जो बिक सकता है वही टिक सकता है हर गलत को सही बोलनेवाले समादृत है। भौतिकवादी युग में सुविधा किसे नहीं चाहिए।

असली चुनौतियों से भरा है यह दौर। किसकी जूझ में कितना दम है ? कौन प्रतिकूलताओं में अविचल खड़ा रह सकता है?कौन समाज को जगाकर वैचारिक स्वातंत्र्य का शंखनाद कर सकता है ? वही काल प्रवाह में शेष रह जायेगा।क्योंकि समय और समाज से निरपेक्ष रहकर सृजन संभव ही नहीं।

पत्रकार, लेखक, चित्रकार गायक ,वैज्ञानिक, नेता, खिलाड़ी, धर्मयोद्धा, शिक्षक, चिकित्सक ही नहीं सभी प्रभुवर्ग के लोग चुनौतियों के रूबरू हैं। कुछ बिल्ली की तरह आँखें मूंदकर दूध पी रहे हैं।कुछ शुतुरमुर्ग की तरह रेत में आँखें छुपाए बैठे हैं।

मुट्ठी भर लोग ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सही परिप्रेक्ष्य में आँकने का जोखिम उठाने को तैयार हैं।

क्यों भूला जाए कि इतिहास अपनी हजार आँखों से निरंतर देख रहा है। वह मूक रहकर भी गवाही देता है।

-नागपुर

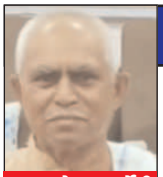

कृष्णदेव चतुर्वेदी

भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

विश्व में भारत की पहचान वैदिक देश के रूप में जानी जाती है। हजारों साल पहले से यहां की शिक्षा पद्धति में शास्त्रार्थ की परंपरा अच्छी सनी और पढ़ी जाती है, राजाओं के राज दरबार भी विभिन्न विषयों पर बड़े-बड़े शास्त्रार्थ आयोजित करते थे, जो महीनों चला करते थे। इसमें पक्ष और प्रतिपक्ष या निरपेक्ष रहने की आजादी प्राप्त रहती है।

हमारे यहां निंदा करने वाले निंदक, समालोचक, आलोचक आदि के रूप में सम्मानित किया जाता है। यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अंतर्गत आता है। तभी तो भक्तिकालीन साहित्य के पुरोधा एवं निरंकारी ईश के उपासक महात्मा कबीर ने लिखा है-

निंदक नियरे राखिए,
आंगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना
निर्मल करें सुभाय।। .....

वर्ष उन्नीस सौ साठ के दशक में सरकारी स्कूलों में गई जाने वाली प्रार्थनाओं में से जो हमारे विद्यालय में गई जाती थी उसकी एक पंक्ति में यह प्रतिज्ञा दिखाई पड़ती है।-

हम दीन दुखी निबलो
विकलो के,
सेवक बन संताप हरे!
जो है अटके-भटके भूले बिसरे,
उनको तारें खुद तर जाए!!

अर्थात शिक्षा के माध्यम से जन सामान्य को ऊर्जावान बनाएं, इस हेतु हमें आलोचना, समालोचना, विवेचना और उसकी व्याख्या करने की पूरी छूट प्राप्त है। हमारे ग्रंथ शास्त्र और धार्मिक पुस्तक सहिष्णु है, तथा क्रूरता से मुक्त रखती है।

परिणाम स्वरूप भारत में वेदों पर ही सहस्त्रों शास्त्रार्थ हुए हैं, इनका संकलन स्मृतियों और श्रुतियों तथा भाष्यों के रूप में आज भी उपलब्ध है। शिक्षण कार्य करते समय मैं भी विद्यालयों में छात्रों को पढ़ाया है-

मा वद् मिथ्या, मा वद व्यर्थम।
न चल कुमार्गे, न कुरू अनर्थम् ।।

मानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी कहा है कि- चड़ चेतन गुण दोष मय, विश्व किंन्ह करतार! संत हंस गुण गहहि, हरी हरी वारि विकार।। अर्थात संसार में गुण अवगुण के परीक्षण हेतु शास्त्रार्थ अनिवार्य परंपरा है , सनातन धर्म और भारत ने इसे बनाए रखा है और मुझे उम्मीद है कि भविष्य में भी बनाए रखेगा। भारतीय विधि व्यवस्था में भी वादी के साथ-साथ परिवादी को अपनी बात कहने का पूरा अवसर दिए जाने की व्यवस्था आज भी है।

हमारे देश की जीवन शैली में गुरु परंपरा का व्यवहार परिलक्षित है जो स्वतंत्रता का समर्थन और पोशाक है, गुरु अपने शिष्य को किसी विशेष पूजा पद्धति के अनुसार जीने को वाद्य नहीं करता बल्कि कहता है कि एक पिता की संताने अपना आचरण शैव, वैष्णो या शाक्त सम्प्रदाय के रूप में प्रस्तुत कर सकता है। राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त ने भी लिखा है-

भारत माता का मंदिर
या संता का संवाद यहां है/
सब सब का स्वागत सबका आधार
सब का सब सम्मान यहां है//

भारत के इस गुण की प्रशंसा विश्व के प्रयास सभी देश करते हैं। इस आजादी का दुरुपयोग करने वाले कुछ लोगों से सतर्क रहने के लिए भी आग्रह किया जाता है एक दोहा कहता है कि-

लोभी लंपट नीच से,
रहना सदा सतर्क।
रूप रंग में सम दिखे,
रखते जिव्हा फर्क।।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को परिभाषित करती हुई मेरी कविता -

वेद पुराण यहां की वाणी,
कण-कण सोना चांदी।
कथा-कहानी रासो-आल्हा,
घर-घर गाती दादी।
दानव-स्वर को रोका हमने,
कह कर सारी सच्चाई।
कृष्णदेव ने कभी न छीना,
मानव मन की आजादी।।

-भोपाल

वाणी की दहलीज तले

डॉ सीमा अग्रवाल

कौन थे वह सृष्टि कर्ता?
जिसने औरत को बनाया,
वाणी की दहलीज तले
यूँ चुपचाप कराया है।

कुछ कह ना सके
आंसू भर नयनों में
पर वह रो ना सके
यूँ चुपचाप कराया है।

मायका हो या ससुराल
सबकी बीच अकेली है
रिश्ते नातों की भीड़ में
यूँ चुपचाप कराया है।

रिश्तो को बांधना चाहे
पर वह बोल ना सके,
सुनने वाला कौन यहां
यूँ चुपचाप कराया है।

अब आदत सी बनी
अनसुना कर जाना है
जो अच्छा अपना हो बाकी
यूँ चुपचाप कराया है।

घर की सुंदरता और
अपने शरीर को सवारें
पर ध्यान देना है
यूँ चुपचाप कराया है।

परिवार के हर सदस्य
के समय पर काम हो
वही कुशल ग्रहणी है
यूँ चुपचाप कराया है।

आभाषित सा लगता
दिन बदलेंगे अब फिर
औरत को मान मिले
यूँ मुखर हो बोल सके।

कौन थे वह सृष्टि कर्ता? जिसने औरत को बनाया,
वाणी की दहलीज तले, यूँ चुपचाप कराया है।

-भोपाल

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की आड़ में देश के हित नजरअंदाज क्यों?

शशि पाटनी

सत्य की खोज और उसे साझा करने में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है. विश्व मानव अधिकार घोषणा पत्र के साथ ही हमारे संविधान ने भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को स्वीकृति दी है.

वैसे भी प्रकृति की इनायत है कि सभी जीवो के पास सुख दुख सहित अपने मनोभावो को अभिव्यक्त करने की क्षमता है.इसीसे सामाजिक एकता को बल मिलता है.संस्कृति,कला ज्ञान की विभिन्न धाराये विकसित होती है. लेकिन ध्यान रखना होगा कि हर अती की तरह इसका दुरुपयोग भी घातक हो सकता है.

अन्य अधिकारों की तरह यह स्वतंत्रता भी निरंकुश नही हो सकती.आज लोकतंत्र मे अधिकार के नाम पर इसका दुरुपयोग ज्यादा होता नजर आ रहा है. कट्टरपंथी अपने दकियानूसी विचारो से देश की अखंडता को खंडित करने मे हिचकिचाते नही. लगता है देशद्रोही की परिभाषा मे परिवर्तन लाकर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मर्यादित करना होगा.इसके साथ ही इस स्वतंत्रता पर सरकारी दबाब और नियत्रण के प्रयासों का विरोध भी जरुरी है.वैसे सरकारी विज्ञापन के लालच मे मीडिया निष्पक्ष नहीं रह पाती.

अभिव्यक्ति की विवेचना संविधान अथवा अन्य कानून की तरह तो होती ही रहती है लेकिन आज के माहौल मे जब नश्वर जीवन की आजादी ही खतरे मे है तबअगर स्थायीआध्यात्मिक अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर गौर किया जाये तो यह न केवल चेतना के विस्तार की पृष्ठ भूमि सुदृढ़ करेगी बल्कि धर्म के नाम पर हो रहे अधर्म और विस्तारवादी नीति की अनुपयोगिता को समझने मे सहायक होगी.

आज हर तरफ विध्वंस दस्तक दे रहा है.कितने ही काल के गाल मे समा गये हैं.जीवन की नश्वरता के बावजूद दुनियां पर राज करने की महत्वाकांक्षा ने भय का माहौल बना दिया है.जीने की स्वतंत्रता ही खतरे मे है.शक्ति के बल पर सब कुछ हडपने के प्रयासों मे दुनियां ने दो विश्व युद्धो की विभिषीका झेली है अब फिर उसी मुहाने पर खडे हैं,जो निश्चित है और प्रकृति को मंजूर है वह तो समयानुसार हो कर रहेगा.

कर्म तो सबको भुगतने ही है लेकिन हाथ पर हाथ रखकर बैठना भी सही नहीं लगता.जो सक्षम हैं वे ईट का जवाब पत्थर से देने की बात तो कर रहे है,किसमे कितना दम है यह तो समय ही निश्चित करेगा.विस्तारवादी हरकतो से आतंकवादी का नया रुप शैतान से भी ज्यादा खतरनाक बन गया है

इस परिस्थिति मे भी हम धर्म के नाम पर बंट रहे है.हमारे नेता आये दिन इतिहास की कब्र पर कर्मकांड से धर्म का भ्रामक प्रचार कर शेखी बघार रहे हैं. आज धर्म भीरु कट्टपंथी नही देश भक्तो की जरुरत है.इतिहास का एक पक्षीय बखान नफरत की खाई बढायेगा.कट्टर पंथी नेताओं मुल्लै

मौलवियों साधु सन्तों की मीडिया पर होने वाली बहस आग मे घी का काम कर रही है यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देश के हित को नजरअंदाज कर व्यापारिक हितो को ही बढावा दे रही है.

आध्यात्म को धर्म की सीमा मे बांधकर हमने अपनी चेतना की अपरिमित शक्ति को विस्मृत किया है.उस पर धर्म के ठेकेदारों ने इसे कर्मकांड मे अटका दिया और रीतिरिवाजो परम्पराओ ने चेतना के अनुभव मे मुश्किले बढा दी. जिसने अपनी चेतना को पहचाना वह जन्म मृत्यु से मुक्त अनंत चेतना अनंन्त ऊर्जा मे समाहित हो गया.इसमे न धर्म न स्त्री पुरुष का भेद आडे आसकता.

जरुरत है तो सिर्फ अपनी चेतना के अस्तित्व पर अडिग विश्वास की.बाहरी दुनियां से परेशान हमारी दृष्टि जब क्षणभर भी अन्तरमुखी होती है तो परमशांति और सुख महसूस होता है.यही चेतना की सत्ता की पहचान है.मौन और ध्यान इस सत्ता को विस्तार देता है और मैं का अहंकार टूट कर ब्रहमांड की विशालता और जीवन मृत्यु के खेल को समझ जाता है.

इतिहास साक्षी है कि कितने ही तीसमार खाँ आये और चलेगये. प्रकृति के आगे कोई नही टिका.इनआतंकवादियो का साम्राज्य भी समय आने पर खुद ही नेस्तनाबूद होगा.इस परेशानी का सामना सब को मिलकर करना होगा.

– जयपुर

भारतीय प्रजातंत्र का मूल है अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

सविता व्यास

लोकतंत्र असहमति के अधिकार और लोगों को विचार रखने के अधिकार पर आधारित है। हमारे समाजों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की आवश्यकता है ताकि वे सरकारों द्वारा अपने नागरिकों पर किए जाने वाले सबसे जघन्य अत्याचारों से खुद को बचा सकें- बेन ओकरी (कवि और उपन्यासकार)

अभिव्यक्ति से तात्पर्य है विचारों, भावनाओं, संवेदनाओं आदि को लिख कर, बोलकर, कला के माध्यम से भीतर के भावों को बाहर लाना।

अभिव्यक्ति भीतर के भावों को प्रकट करती है, आकार देती है। इसके माध्यम से हम अपने विचारों को दूसरों को अनुभूत करा सकते हैं। खुशी, दु:ख, क्रोध आदि मनोभावों को प्रकट कर सकते हैं। मनोवैज्ञानिक कहते हैं- यह हमारे व्यक्तित्व समायोजन और मानसिक शान्ति पाने का साधन है जिसके कारण हमारी दमित भावनाएं बाहर आ जाती हैं जो हमारे मानसिक स्वास्थ्य, शारीरिक स्वास्थ्य के लिए बहुत जरूरी है।

अगर हम सही जगह पर विरोध न प्रकट करें तो ये अपराध से भी अधिक ख़तरनाक होता है। अन्याय के सामने मौन ओढ़ लिया जाता है तो वहां सत्य दम तोड़ देता है। अन्याय करने वाले को बल मिलता है वह और अधिक निरंकुश हो उठता है। यह चुप्पी हमारे भीतर कुंठा उत्पन्न करती है जो हमारे विचारों को विकृत कर देती है और परिवार और देश के पतन का कारण बनती है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता क्या है?

अपने विचारों, मतों, सूचनाओं, विरोधों को मौखिक, लिखित, मुद्रित, कला आदि के जरिए बिना डर के व्यक्त करने का अधिकार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है। प्राचीन काल में प्रजा को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नही थी। शासक निरंकुश हो कर राज किया करते थे। राम -राज्य ही शायद ऐसा राज्य था जिसमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता थी तभी तो रजक द्वारा निर्भीक हो कर सीताजी पर कलंक लगा दिया गया था और कोई दंड नही पाया था।

प्राचीन काल में कहीं भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लेख नही है। अंग्रेजों के समय तो और भी बुरे हालात थे। कोई भी सच कहने की हिम्मत नही रखता था। जरा सा मुखर होने पर कालेपानी तक की सजा दे दी जाती थी।

जब आज़ादी के लिए आंदोलन शुरू हुआ तब जागरूकता आई। गांधीजी, और अन्य स्वतन्त्रता सेनानी मुखरता से बोलने लगे। लेखक गण छद्म नाम से जनता को आजादी के लिए प्रेरणा देने के लिए लिखा करते थे। अभिनेता नाट्य आदि से जनता को जागरूक कर शासक के विरुद्ध आवाज़ उठाने की प्रेरणा दिया करते थे। उन्हें इसकी कड़ी सजा मिला करती थी, लाठियों से पीटा जाता था, कारावास में डालकर प्रताड़ित किया जाता था फिर भी उस समय के अगुआ कायर नही थे, साहस से आवाज़ उठा रहे थे।

सारी प्रताड़नाओं को नजरंदाज करते हुए आजादी के दीवाने अपने देशवासियों के अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए प्रतिबद्ध थे। वे जनमानस को समझा रहे थे कि देश हमारा है, हम दास नही हैं, बोलना, स्वतन्त्रता ये सब हमारा अधिकार है। हम इस देश की संतान हैं यहां के हवा -पानी पर हमारा अधिकार है।

जब भारत स्वतंत्र हुआ और संविधान बना तब निर्माताओं ने देश के नागरिकों के लिए संविधान के अनुच्छेद १९ के अंतर्गत बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार दिया गया जिसमें कहा गया कि नागरिक अपने विचारों, मतों, सूचनाओं, विरोध को बिना किसी डर के व्यक्त कर सकता है।

कहा गया कि यह स्वतंत्रता स्वस्थ लोकतंत्र की नींव है। किसी भी माध्यम से नागरिक अपने विचारों को निर्भीक हो कर वयक्त कर सकता है। उसे यह जानने का हक है कि सरकार उनकी उन्नति के लिए क्या कर रही है? या सरकार ने ऐसा क्यों किया? हम सरकार से उसके वादे पूरे न करने पर सवाल कर सकते हैं। हम धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक या सांस्कृतिक प्रथाओं पर भी सवाल उठा सकते हैं, बहस कर सकते हैं। हमें किसी समाचार पत्र के लेख पर टिप्पणी करने का भी अधिकार है चाहे वह समर्थन के लिए हो या आलोचना के लिए हो। पत्रकार को पूर्ण अधिकार है कि जनता के लिए आवाज उठाए। कहीं कोई कार्य हुआ है या नही, कहां क्या गलत हो रहा है वह निर्भय हो कर अपनी लेखनी के माध्यम से सरकार का ध्यान आकर्षित कर सकता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता क्यों जरूरी है?.... अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से मानव अपने विचार खुल कर रख सकता है इस आत्म-अभिव्यक्ति के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है।

यह स्वतंत्रता संवाद को जन्म देती है, आपसी समझ विकसित करती है और ज्ञान को बढ़ाती है। इस स्वतंत्रता से हम हमारे विचारों और सूचनाओं का आदान -प्रदान कर सकते हैं। यह स्वतंत्रता हमें हमारी सरकार से सवाल पूछने का अधिकार देती है जिससे सरकार जवाबदेह बनती है। विकास के कार्यों के लिए प्रतिबद्ध रहती है। अपने किए हुए वादों को पूरा करने के लिए

मजबूर रहती है। बेहतर नीतियां बनाती है और उसे लागू करने के लिए विवश होती है। हम हमारी समस्याओं को उन्हें बता सकते हैं। अगर हमें बताने की स्वतंत्रता नही होगी तो हम सभी संभावित समाधानों से वंचित रह जाएंगे।

इस स्वतंत्रता की सीमा होनी चाहिए?.. हां इसकी भी सीमा होनी चाहिए। जरूर यह मौलिक अधिकार है पर असाधारण परिस्थितियों में इसे सीमित किया जाना चाहिए। हिंसा, जातिभेद, भेदभाव को बढ़ावा देने वाले भाषण, लेख, चित्र, फिल्म आदि पर प्रतिबंध लगना चाहिए। किसी धार्मिक विचार की व्यर्थ आलोचना कर दंगे भड़काने वाले भाषणों, इत्यादि पर सख्ती की जानी चाहिए। राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय गान, देश का अपमान करने वालों पर कार्रवाई होनी चाहिए। पर हां यह प्रतिबन्ध केवल लोगों को नुकसान से बचाने के लिए होना चाहिए न कि सरकारों को आलोचना से बचाने के लिए।

आज हम देख रहे हैं कुछ पक्ष निर्लज्जता से, ऊंची आवाज़ में अपनी बात रख रहे हैं जो हिंसा का कारण बन रहे हैं, अशांति का कारण बन रहे हैं। कुछ पत्रकार, संवाददाता जो जनता के लिए आवाज़ उठाने का दायित्व रखते हैं वे बिक चुके हैं और जनता को गुमराह कर रहे हैं।

कुछ लोग हैं जो निर्भीकता से आवाज़ उठा रहे हैं, उनके पीछे जाँच एजेंसियां छोड़ दी जाती है। उन्हें अकारण कारावास में डाल दिया गया है। उच्च संस्थाएं अपना कर्तव्य भूल चुकी हैं, हां में हां मिला रही हैं। रतौंधी, अंधापन, मोतियाबिंद अक्ल की आंखों में उतर आए हैं। हमें नहीं भूलना चाहिए कि अगर हम अब भी मौन रहे तो निरंकुशता देश में फिर से जड़े जमा लेगी। धीरे -धीरे हम अपनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार खो बैठेंगे। प्रजातंत्र को खो बैठेंगे। यह स्वतंत्रता हम सभी के लिए बहुत अधिक जरूरी है। इतनी ज्यादा जरूरी है कि नागरिकों, समाज, पत्रकार, शिक्षकों, लेखकों, वकीलों, कार्यकर्ताओं और आप और मैं हम सभी की जिम्मेदारी है कि इसके लिए खड़े हों इसे सुरक्षित रखें। एकजुट हो कर अन्याय, असत्य के विरुद्ध बोलें। तब ही हमारे देश में लोकतंत्र महफूज़ रह पाएगा जिसे हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने अपना सब कुछ न्योछावर करके हमारे लिए प्राप्त किया था।

– इंदौर, मध्यप्रदेश

लोकतंत्र को जीवंत बनाती अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता वह अधिकार है, जिसके माध्यम से व्यक्ति स्वतंत्र रूप से अपने विचार, भावनाओं, को बिना भय के व्यक्त कर सकता है। भारत के संविधान के् अनुच्छेद १९(१)(क) में नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है, जो लोकतंत्र को जीवंत और सशक्त बनाता है।

सुनीता शर्मा सिद्धि

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता केवल बोलने तक सीमित नहीं है, अपितु इसमें लेखन एवं, कला के माध्यम से अपने विचारों को व्यक्त करना , साहित्य, अभिनय, कहानी और सोशल मीडिया के माध्यम से भी शांतिपूर्ण ढंग से अपनी बात रखना भी शामिल है। यह स्वतंत्रता समाज में विचारों की विविधता को स्थान देते हुए नए नए दृष्टिकोणों को जन्म देती है। जब लोग मुक्त रूप से समाज और राष्ट्र के हित में अपने विचार रखते हैं, तभी वहां सुधार, नवाचार और प्रगति की संभावनाएं दृष्टिगोचर होती है। लोकतंत्र में सरकार और सत्ता से प्रश्न पूछना, नीतियों की आलोचना करना और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाना अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्वपूर्ण पक्ष है। यह अधिकार सत्ता को निरंकुश होने से रोकता है और नागरिकों को जागरूक बनाता है। स्वतंत्र प्रेस पत्रकारिता और मीडिया इसी अधिकार का परिणाम हैं, जो समाज का दर्पण बनकर सच को सामने लाते हैं। हालाँकि, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पूर्णतः निरंकुश नहीं है। समाज की शांति, सुरक्षा, नैतिकता और दूसरों के अधिकारों की रक्षा के लिए इस पर कुछ उचित प्रतिबंध भी लगाए गए हैं। नफरत फैलाने वाले भाषण, हिंसा के लिए उकसाना, मानहानि या देश की एकता और अखंडता को नुकसान पहुँचाने वाली अभिव्यक्ति कदापि स्वीकार्य नहीं हो सकती। इसलिए इस स्वतंत्रता के अंतर्गत ऐसी कोई विचारधारा उत्पन्न ना हो जो समाज राष्ट्र के लिए घातक हो । अतः गलत विचारधारा का उपयोग कदापि उचित नहीं है। क्योंकि गलत विचारधारा की अभिव्यक्ति समाज में कटुता फैलाती है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मानवीय समाज में न केवल उसकी गरिमा का अपितु लोकतंत्र को मजबूत करने का अहम हिस्सा भी है। इसी परिपेक्ष में कहा जा सकता है कि भारत का प्रत्येक नागरिक अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से व्यक्त तो कर सकता है परन्तु नफरत फैलाना ,किसी की गरिमा को ठेस पहुंचाना या हिंसा के लिए उकसाना ये कदापि उचित नहीं होगा।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तभी सफल होगी जब हम उसका उपयोग जिम्मेदारी और सहिष्णुता के साथ करे क्योंकि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता किसी भी लोकतांत्रिक समाज की आत्मा होती है। अतः मनुष्य द्वारा विचारों का मुक्त आदान-प्रदान समाज को जीवंत बनाकर उसकी प्रगति का मार्ग प्रशस्त करता है कहा जा सकता है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मनुष्य को सत्य कहने, लिखने और रचनात्मक कार्य करने का अवसर देती है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में विचारों को पंख मिले यह लोकतंत्र की आत्मा है इसमें कभी जंग ना लगे।

-भोपाल

वैचारिक अभिव्यक्ति लोकतंत्र की मूल आत्मा

संजीव ठाकुर

हर देश में राष्ट्र के प्रति और राष्ट्रहित के प्रति चिंतन करने वालों का समूह होना चाहिए,जो प्रजातांत्रिक लोकतांत्रिक तथा राष्ट्रहित के विचारों और विकास के मूल मंत्र को नई ऊर्जा ताजा हवा और आगे बढ़ने की सच्चाई को इंगित कर सकें। बिना संस्कृति, संस्कार और वैचारिक क्षमता के कोई भी राष्ट्र वैश्विक स्तर पर अंतरराष्ट्रीय प्रगति करने की सोच भी नहीं सकता। वैचारिक और सैद्धांतिक अंतरधारा, सिद्धांतों को कुचला या नष्ट नहीं किया जा सकता। व्यक्तिगत वैचारिक अभिव्यक्ति भारत के संदर्भ में गणतंत्र की मूल आत्मा है।

विचार और सिद्धांत व्यक्ति की अंतःप्रज्ञा होती है। यह सिद्धांत तथा अंतः विचारधारा जनमानस तक पहुंचने से बाधित किया जाए तो अंतरात्मा को प्रभावित करती है। इसके गहरे प्रभाव से व्यक्ति वह सब कर सकता है, जो बिना मार्गदर्शन के व्यक्ति नहीं कर सकता। प्राचीन काल से अब तक मनीषियों के वैचारिक सिद्धांत और विचारधारा सदैव समाज के दिग्दर्शक मार्गदर्शक रहे हैं। इनकी भूमिका सदैव महत्वपूर्ण रही है। यदि यही सिद्धांत और अंतः प्रज्ञा जनमानस आत्मसात कर लेता है, तो इसका प्रभाव एक जन आंदोलन का रूप ले लेता है और यहीं से युग परिवर्तन की लहर उत्पादित होती है।

प्राचीन यूनान में एक बहुत ही कुरूप किंतु विद्वान व्यक्ति रहते थे। उनके विचारों में मौलिकता,नयापन जनजागृति की अद्भुत क्षमता थी। उनकी विद्वता के कारण आम जनमानस होने राजा से ज्यादा महत्व और बुद्धिमान मानते थे। राजकीय तानाशाही के चलते उनके विचारों के कारण उनको मृत्युदंड दे दिया गया। जहर का प्याला पीने के बाद भी विद्वान, चिंतक, सुकरात अमर हो गए, उनकी विचारधारा आज भी जीवित है, एवं लोग उसे अपनाकर अपना जीवन सुधारने में इसका उपयोग करते हैं।

अब्राहम लिंकन ने अमेरिकी स्वतंत्रता के बाद दास प्रथा के बारे में कहा था कि दास भी मनुष्य हैं, उन्हें भी उतना ही जीने का अधिकार है जितना स्वामी को है। अब्राहम लिंकन के आंदोलनकारी विचार से तत्कालीन समय में अमेरिका के लोग घबरा गए थे,और उनकी हत्या कर दी गई थी। पर अब्राहम लिंकन के विचारों ने दास प्रथा के उन्मूलन की अंतर आत्मा को जागृत कर दिया था और जनमानस ने अपने अधिकारों के लिए लड़ते हुए दास प्रथा से मुक्ति पाई थी।

स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि हम जो सोचते हैं वही बन जाते हैं। विचार एवं सिद्धांत ही व्यक्ति का निर्माण करता है। वही दुष्ट होने या महान होने का निर्णायक है। और बिना विचारों सिद्धांतों के व्यक्त व्यक्ति का अस्तित्व ही नहीं । विवेकानंद के विचार सर्व कालीन प्रासंगिक है। उनके विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने उनके जीवित रहते हुए थे। आज हमारे बीच विवेकानंद सशरीर मौजूद नहीं है, पर उनके विचारों की महत्ता कायम है।

भौतिक शरीर के नष्ट हो जाने से और भौतिक विचार तथा सिद्धांत उतनी ही तीव्रता रखते हैं, वेग रखते हैं, जो एक समाज में परिवर्तन ला सकती है । विचारों की यह अमरता तथा तीव्रता किसी भी तानाशाह के लिए इतनी खतरनाक है, जितनी की सुप्त शेर की गुफा में रहना। जनता के मध्य शुद्ध विचारधारा के जागृत होने पर क्रांति लाई जा सकती है। फिर चाहे वह फ्रांस के वर्साय के महल का विध्वंस हो अथवा भारत की स्वतंत्रता हेतु वृहद आंदोलन हो। व्यक्ति या व्यक्तियों के दबाव को दबाने के बाद विचारों की पीड़िता ने जनसामान्य को एक गरजते हुए सिंह में तब्दील कर दिया था।

यह शाश्वत सत्य है कि व्यक्ति को जरूर आप दबा सकते हैं,पर विचारधारा सिद्धांत अजर अमर होते हैं,और वही युग निर्माण में अपनी महती भूमिका निभाते हैं।

विचारों के संदर्भ में कहा जाता है कि एक व्यक्ति का विचार तब तक उस व्यक्ति के पास है, जब तक वह अकेला है किंतु जैसे ही विचारधारा एवं सिद्धांत का प्रचार प्रसार होता है, तो वह व्यक्ति अकेला ना रह कर उस जैसे हजारों लाखों लोग उसके साथ हो जाते हैं। तब वह अकेला नहीं रह जाता। वह अपने विचारों के माध्यम से जन सामान्य को प्रभावित कर लोगों को उस लड़ाई में शामिल कर लेता है, जिस लड़ाई के वह कभी अकेले नहीं लड़ सकता था। विचारों सिद्धांतों की तीव्रता आवेश तथा सघनता किसी भी क्रांतिकारी लक्ष्य की प्राप्ति में एक बड़ा साधक हो सकता है। विचार व सिद्धांत एक से दूसरे व्यक्ति तक स्थानांतरित होते रहते हैं। जिसमें विचारों को सघनता प्राप्त होती है ताकि सत्ता के दमन के समय वैचारिक अमरता स्थाई बनी रहे।

चीन उत्तर कोरिया जैसे राष्ट्रों में विचारों के इस स्वतंत्र का प्रवाह को बाधित नियंत्रित कर दिया गया। अभिव्यक्ति के तमाम माध्यमों को प्रतिबंधित कर दमन चक्र चलाया गया। वहां विचार और सिद्धांत विद्वान व्यक्ति तक ही सीमित रहे उसका फैलाव या विस्तार नहीं हो पाया। जो मानव समाज तथा मानव अधिकारों की संवेदना तथा धाराओं का उल्लंघन भी है।

किसी स्वस्थ स्वतंत्र राष्ट्र के लिए व्यक्ति समाज और राष्ट्र के विचारों की स्वतंत्रता नवीनता तथा उत्कृष्टता अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि विचारधारा और सिद्धांतों को रोक पाना किसी भी सत्ता या निरंकुश राजा के नियंत्रण में नहीं होता। विचारों और सिद्धांत अनादि काल से गतिशील है तथा अनंत तक जगत तक गतिशील रहेंगे,और उसका प्रतिपादक एवं अनुशीलन कर्ता विचारों के साथ अमर हो जाते हैं।

–रायपुर, छत्तीसगढ़

निगहबानी की दरकार रखती है अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

प्रिंस अभिशेख
'अज्ञानी'

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हिंदुस्तान को दीर्घकालिक जद्दोजहद व कुर्बानियों से मयस्सर हो सकी है। ऐसा नहीं कि दुनिया के लगभग २२५ राष्ट्रों में सिर्फ भारत को ही सहस्त्राब्दियों के संघर्ष से यह सौभाग्य हासिल हुआ हो, प्रायः सभी देशों को इसके लिए भारी मशक्कत करना पड़ी है। पीढ़ी दर पीढ़ी वंशानुगत राजाओं ने तो कभी तानाशाहों और कभी आक्रांताओं ने इंसानी जमात की अभिव्यक्ति 'तालाबंद' रखी। रही सही कसर सेठ साहूकार व महलों के आला अफसरान पूरी करते रहे।

चूंकि मानव ही क्या, धरा का प्राणी मात्र जन्मना स्वातंत्र्य का अधिकारी है लेकिन संसार में आते ही उसे पग-पग पर बंदिशों से दो-चार होना पड़ता है। मानव की जहां तक बात है तो कहा जाता है- वह मूलतः पशु है जो शिक्षा-दीक्षा, लालन-पालन पोषण आदि से शनैः-शनैः या क्रमशः मनुष्य बनता है और उनमें से कई तो मानव देह के अंदर ताउम्र जानवर ही बने रहते हैं। लिहाजा, इंसान को सभ्य सुसंस्कृत या प्रकारांतर से इंसानियत युक्त इंसान बनाने अथवा बनाए रखने हेतु नाना प्रकार के अंकुश घर-परिवार, रक्त संबंधी, पुरा पड़ौसी जातीय/धार्मिक समुदाय और शासन-प्रशासन आदि से लगाए जाते हैं। इनमें से बहुधा अंकुश मौखिक लेकिन परंपरा से सर्वमान्य होते हैं और कतिपय बंदिश लिखित रूप में कानूनन स्वीकार्य होती हैं।

उनमें अभिव्यक्ति पर पहरा भी सम्मिलित है। इस तथाकथित चौकसी की अनेक बुद्धिजीवी, कतिपय लोकतांत्रिक संगठन व समूह आदि निंदा करते हैं लेकिन यह निगरानी मूलभूत रूप से इसलिए ग्राह्य की जाती है कि स्वतंत्रता के नाम पर मनुष्य स्वैच्छाचारी ना हो सके।

लिहाजा, इंसान को अपनी वाणी, लेखनी और आचार प्रणाली अनिवार्यतः मर्यादित रखना होती है अन्यथा उसे अपने घर-परिवार, नाते-रिश्तेदार, मोहल्ला, ग्राम या नगर निकाय तथा शासन-प्रशासन आदि से घोषित-अघोषित दंड का शिकार होना पड़ता है। निश्चय ही प्रजातांत्रिक राष्ट्र में हमें संवैधानिक रूप से अभिव्यक्ति का हक हासिल है लेकिन यह तब ही तक प्राप्य है, जब तक कि हमारी बोली, कलम या कार्यप्रणाली से दूसरे की अभिव्यक्ति बाधित, सीमित, अंकुशित अथवा समाप्त ना होती हो।

इसे हम एक उदाहरण से भी समझ करते हैं कि हमें नंग धड़ंग रहने तक का अधिकार प्राप्त है लेकिन हम अपने घर में भी उसी दायरे या कोने में नंगे हो या रह अथवा बने रह सकते हैं, जिससे कि हमारी नंगई से दूसरा शर्मशार ना हो। यदि हम इस मर्यादा से बाहर जबरन आते हैं तो पहले हमारे परिजन हमें घर व संबंधों से बेदखल करेंगे, फिर पड़ौसी और तब भी हम अपने नंगेपन से आजिज ना आए तो शासन-प्रशासन हमें सींखचों में कर हमारी नंगई को ढांपने विवश होगा। कहना ना होगा अभिव्यक्ति का अधिकार भी इसी प्रकार का है। व्यक्ति को अपने रंग रूप, धन-वैभव, जाति, धर्म, पद-प्रतिष्ठा और यहां तक कि हुनर (तकनीक) का भी अहंकार होना सहज-स्वाभाविक है लेकिन जब यह घमंड सिर चढ़कर बोलने लगे और दूसरे के स्वाभिमान को आहत करने लग जाए तो फिर उसका उपचार विविध स्तर पर करने के प्रावधान दुनिया के सभी राष्ट्रों में हैं।

अभिव्यक्ति का स्वातंत्र्य भी इसी प्रकार का है। व्यक्ति को अपनी वाणी, लेखनी या कार्यशैली को मनोनुकूल अपनाने व अपनाए रखने का हक है लेकिन उसकी सीमा वहीं तक है, जहां तक कि हमारे बोल/शब्द या आचार-विचार/कार्य व्यवहार दूसरे के जीवन को विपरीत रूप से प्रभावित प्रताड़ित अथवा अंकुशित ना करते हों अर्थात अन्य के स्वातंत्र्य में बेजा दखल ना देते हों। इसीलिए हमारे शास्त्र, ऋषि-मुनि सदा से हमें मनसा-वाचा-कर्मणा एक रहने की नसीहत देते आए हैं। उसमें अभिव्यक्ति का स्वातंत्र्य अंतर्निहित है। अपनी ही वाणी से पलटने वाले अपने मन के बड्डे (बड़े), जगत के थू-थू कहलाते हैं।

अतएव हमारी अभिव्यक्ति निश्चय ही तपस्या, निष्ठा, साधना, धैर्य व कौशल मांगती है। अधिसंख्य लोग मनमाफिक अभिव्यक्ति के आकांक्षी होते हैं लेकिन उसके लिए उन्हें जंगल भी मुफीद नहीं हो सकता। जंगल में जाकर भी जो ऊल-जलूल बड़बड़ाएगा, पागलों की मानिंद चीखेगा-चिल्लाएगा तो वहीं पालक/अभिभावक पड़ौसी, नाते-रिश्तेदार व शासन-प्रशासन के रूप में जंगली जानवर हमलावर हो जाएंगे।

अस्तु, हमें अपना स्वयं का मान-सम्मान ही नहीं, अस्तित्व भी मेहफूज रखना है तो अपने अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य को कदम दर कदम स्वच्छंदता में बदलने से रोकना होगा। ऐसा नहीं करने पर स्वयं व संसार की निगहबानी से बच भी जाएं, आत्मा परमात्मा से कभी नहीं बच सकेंगे।

संपादक निर्दलीय समाचार पत्र समूह सह प्रकाशन
भोपाल/नई दिल्ली
संपर्क - ९८२६४२२८२०

बोलो पर सोच-समझकर! या फिर जो कहा जाए, वही सच माना जाए?

वल्लभ किशोर शर्मा

कहा जाता है कि भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। यहाँ नागरिक स्वतंत्र हैं, विचार स्वतंत्र हैं, और अभिव्यक्ति पूरी तरह स्वतंत्र हैं हाँ, बस एक छोटी-सी शर्त है आप वही बोलें जो सत्ता को प्रिय हो।

यदि आप प्रश्न पूछते हैं, तो आप भ्रम फैलाते हैं। यदि आप असहमति जताते हैं, तो आप व्यवस्था के लिए खतरा हैं?

...और यदि आप ज़्यादा ज़ोर से बोलें तो आप राष्ट्रद्रोह की संभावनाओं में प्रवेश कर जाते हैं।

भारत का संविधान पढ़िए, पर ऊँची आवाज़ में नहीं। संविधान का अनुच्छेद १९(१)(क) हमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देता है लेकिन व्यवहार में यह स्वतंत्रता कुछ इस प्रकार अनुवादित होती है-

आप स्वतंत्र हैं जब तक आप चुप हैं। संविधान अब एक सजावटी ग्रंथ बनता जा रहा है जिसका उल्लेख भाषणों में होता है,पर अनुपालन नागरिकों के लिए नहीं, केवल सरकार के लिए व्याख्यात्मक सुविधा के रूप में।

असहमति -लोकतांत्रिक अधिकार या आपराधिक कृत्य हैं असहमति। लोकतंत्र में असहमति शक्ति का संतुलन बनाती है पर आज असहमति का अर्थ बदल चुका है।

सवाल पूछना साजिश है, प्रदर्शन करना कानून-व्यवस्था पर संकट खड़ा करना माना जाता है। लेख लिखना देश की छवि खराब करना है। विडंबना यह है कि जो चुप रहते हैं, वे राष्ट्रभक्त और जो बोलते हैं, वे संदिग्ध माने जाते हैं। यहाँ एक दिलचस्प लोकतांत्रिक प्रयोग भी चल रहा है धार्मिक उकसावे, नफरत और विभाजन यदि सत्ता के आसपास हों, तो वे संस्कृति की रक्षा कहलाते हैं। वही शब्द यदि कोई आम नागरिक या विपक्षी बोले तो वे साम्प्रदायिकता, घृणा भाषण और कानूनी अपराध बन जाते हैं।

वर्तमान में लगता है की अभिव्यक्ति स्वतंत्रता भी अब पार्टी सदस्यता कार्ड देखकर लागू होती है। विपक्ष लोकतंत्र का स्तंभ या स्थायी तौर पर अभियुक्त मान लिया गया है। लोकतंत्र में विपक्ष सरकार की जवाब देही तय करता है लेकिन आज विपक्ष का काम केवल एक रह गया है कटघरे में खड़े रहना।

हर सवाल राजनीतिक दुर्भावना, हर आंदोलन केवल षड्यंत्र माना जाता है और विपक्ष की हर आलोचना देश को बदनाम करने की साजिश और यदि विपक्ष बोले तो मामला दर्ज किया जाता है। यदि नागरिक साथ दें तो संस्थाएँ सक्रिय,और यदि मीडिया दिखा दे तो विज्ञापन नीति याद दिला दी जाती है।

बोलिए जब नेटवर्क उपलब्ध हो आज की अभिव्यक्ति केवल माइक से नहीं,नेटवर्क से निकलती है। इंटरनेट बंद तो आवाज़ बंद?

डिजिटल निगरानी तो आत्म-संयम अनिवार्य हो गया है? सूचना का प्रवाह भी सरकारी स्वीकृति पर निर्भर होता जा रहा है। यह डिजिटल कर्फ्यू की परिष्कृत व्यवस्था का उदाहरण लोकतंत्र में मिल नहीं सकता है। यह लोकतंत्र नहीं, जहाँ बोलने की आज़ादी नहीं।

समाचार पत्र-पत्रिकाओं, चैनल आदि बल्कि पूरे मीडिया से अपेक्षा रहती है कि सरकार से वह सवाल पूछेगा,पर अब वह पहले सरकार से पूछगा क्या यह दिखाना सुरक्षित है। मीडिया चौथा स्तंभ नहीं सजावटी स्तंभ रह गया है। स्वतंत्र पत्रकारिता अब साहस नहीं,जोखिम बन चुकी है और जोखिम लेने की क्षमता हर संस्थान के पास नहीं होती।

तो प्रश्न फिर वही यदि नागरिक डरकर बोले, संस्थाएँ झुककर चलें, विपक्ष अपराधी बने और सत्ता समर्थित नफरत निर्भय घूमे तो इसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कहना स्वतंत्रता शब्द के साथ अन्याय है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता वह नहीं है जो सरकार दे, वह है जिसे सरकार सह सके।

जिस दिन सत्ता आलोचना सुनने से डरे,और सरकार उसे चुप कराने की कोशिश कर रही है क्योंकि इतिहास गवाह है जो समाज प्रश्न करना भूल जाता है, वह उत्तर भी गुलामी में पाता है।

-नरसिंहगढ़

समाचार पत्र-पत्रिकाओं, चैनल आदि बल्कि पूरे मीडिया से अपेक्षा रहती है कि सरकार से वह सवाल पूछेगा,पर अब वह पहले सरकार से पूछगा क्या यह दिखाना सुरक्षित है। मीडिया चौथा स्तंभ नहीं सजावटी स्तंभ रह गया है। स्वतंत्र पत्रकारिता अब साहस नहीं,जोखिम बन चुकी है और जोखिम लेने की क्षमता हर संस्थान के पास नहीं होती।

संस्कृति से संविधान तक अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

विवेक रंजन श्रीवास्तव

रामायण के उत्तरकांड में धोबी द्वारा सीता माता की पवित्रता पर उठाया गया प्रश्न भारतीय संस्कृति में आम आदमी की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की प्राचीन जड़ों को रेखांकित करता है। यह प्रसंग राम राज्य को प्रजातांत्रिक आदर्श के रूप में स्थापित करता है, जहाँ एक साधारण धोबी भी सर्वोच्च सत्ता के समक्ष अपनी असहमति व्यक्त कर सकता है।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद १९(१)(क) इसी परंपरा का आधुनिक प्रतिबिंब है, जो नागरिकों को वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान करता है।

रामचरितमानस में यह प्रसंग प्रजामत को राजा के ऊपर बताता है। राम राज्य का यही स्वरूप इसे आदर्श बनाता है, जहाँ प्रजा की स्वतंत्र अभिव्यक्ति राज्यनीति का आधार बन जाती है।

हमारी संस्कृति रामायण, महाभारत और पुराणों से समृद्ध है, जहाँ वेदों-उपनिषदों में सत्यवचन और असहमति को धर्म का अभिन्न अंग माना गया। धोबी का सामान्य कथन महारानी सीता जी को वनवास का कारण बनने वाला प्रसंग दर्शाता है कि रामराज्य में अभिव्यक्ति वर्ग, जाति या पद से बंधी नही थी, बल्कि लोककल्याण का साधन थी। राम का प्रजाहित सर्वोपरि सिद्धांत प्रजा की वाणी को सम्मान देता है, जो हमारी संस्कृति में लोकतंत्र की प्राचीनता प्रमाणित करता है।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद १९(१)(क) प्रत्येक नागरिक को बोलने, लिखने, कला सिनेमा सोशल मीडिया आदि से विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता देता है। धोबी की भाँति आज कोई भी साधारण नागरिक सत्ता की आलोचना कर सकता है। विपक्ष का कार्य तो सत्ता की नीतियों की समालोचना ही है।

संविधान सभा की बहसों में रामराज्य का उल्लेख हुआ, जहाँ इसे स्वतंत्रता समता प्रजासेवा का प्रतीक माना गया। राम का प्रजा मत को प्राथमिकता देना संविधान की प्रस्तावना में निहित विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से मेल खाता है।

रामराज्य में अभिव्यक्ति का सांस्कृतिक विधान हमारे संविधान में अधिकार के रूप में सभी नागरिकों के लिए है । जिसकी रक्षा न्यायालय साक्ष्य परीक्षण कर करता है।

रामराज्य व्यक्तिपरक था, जहाँ राम की मर्यादा प्रजा वाणी को प्राथमिकता देती थी, जबकि भारतीय संविधान संस्थागत है, जो न्यायपालिका द्वारा संरक्षित होता है। दोनों का उद्देश्य , लोककल्याण है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से सामाजिक सुधार एक प्रक्रिया बना रहता है। राजा राम , प्रजा मत के प्रति संवेदनशील थे, ठीक वैसे ही जैसे अपना संविधान असहमति को लोकतंत्र का स्त्रोत मानता है।

समकालीन प्रासंगिकता और चुनौतियाँ

आज सोशल मीडिया पर नागरिक राम राज्य के धोबी की भाँति सरकार की आलोचना कर सकते हैं, और संविधान इस मौलिक अधिकार को संरक्षित करता है।

राम प्रसंग सिखाता है कि शासक को प्रजा मत सुनना और उसका सम्मान करना चाहिए। फेक न्यूज़ या घृणा भाषण जैसी चुनौतियों पर युक्तियुक्त प्रतिबंध राम की मर्यादा से प्रेरित हो सकते हैं। यह सांस्कृतिक विरासत संविधान को मजबूत बनाती है, जहाँ अभिव्यक्ति लोकतंत्र की रीढ़ है।

इस तरह राम राज्य का धोबी प्रसंग हमारी संस्कृति की गहन परंपरा को संविधान से जोड़ता है। यह स्मरण कराता है कि सच्चा शासन प्रजा की स्वतंत्र वाणी से पुष्ट होता है, जो राम से लेकर आधुनिक भारत तक अटल बना हुआ है।

भारत के पराधीनता काल में मुगल साम्राज्य में और फिर अंग्रेजी शासन में नागरिकों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर निरंतर नियंत्रण रहा पर आजाद भारत में संविधान ने इसे पुनः स्थापित किया है, अब इसे बनाए रखना नागरिकों की कर्तव्य निष्ठा है, क्योंकि स्वतंत्रता के स्वच्छंदता में बदलते ही सरकारों को सामाजिक हित में इन अधिकारों पर कर्फ्यू, इंटरनेट बाधित करना , आपातकाल लगाना जैसे अप्रिय कदम जन हित में उठाने के लिए बाध्य होना पड़ता है, जिसका प्रावधान भी संविधान में है।

अतः अभिव्यक्ति की संवैधानिक स्वतंत्रता नागरिकों के विवेक पर ही बनी रह सकती है, यह तथ्य हर बदलती पीढ़ी को समझना आवश्यक है।

–न्यूयॉर्क

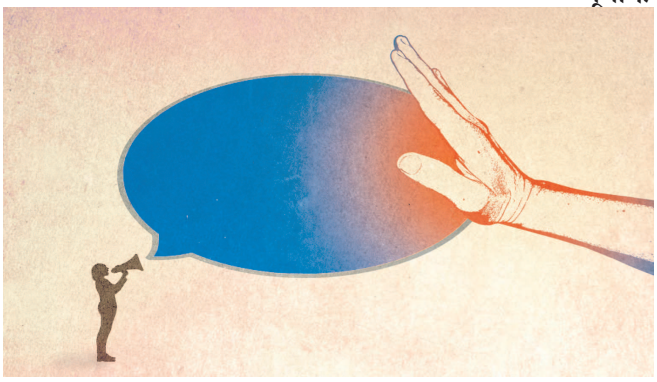

वाणी स्वातंत्र्य के साथ हो कर्म पर नियंत्रण

शशिकांत गुप्ते

वाणी की स्वतंत्रता (Freedom of Speech and Expression) भारतीय संविधान के अनुच्छेद १९ (१)(ए) के तहत सभी नागरिकों का मौलिक अधिकार है, जो उन्हें अपने विचारों और मतों को मौखिक, लिखित, चित्रों या किसी अन्य माध्यम से स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने की अनुमति देता है, जिसमें जानने का अधिकार और प्रेस की स्वतंत्रता भी शामिल है।

जानने का अधिकार और प्रेस की स्वतंत्रता का अधिकार असीमित नहीं है और अनुच्छेद १९(२) के तहत सार्वजनिक व्यवस्था, सुरक्षा और मानहानि जैसे आधारों पर इस पर उचित प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं।

वाणी की स्वतंत्रता की उक्त संवैधानिक परिभाषा समझना बहुत जरूरी है।

वाणी की स्वतंत्रता का महत्व-

समाजवादी चिंतक, विचारक स्वतंत्रता सैनानी डॉ. राममनोहर लोहिया जी ने कहा है कि वाणी की स्वतंत्रता के साथ कर्म पर नियंत्रण भी होना चाहिए।

वाणी की स्वतंत्रता हमारा मौलिक अधिकार है। लोहियाजी द्वारा कर्म पर नियंत्रण होना चाहिए,यह कहने का तात्पर्य है,वाणी मर्यादित होनी चाहिए। उदाहरणार्थ यदि किसी व्यक्ति को अपने से किसी वरिष्ठ या किसी संस्था के अध्यक्ष या किसी उच्च पद पर विराजित व्यक्ति या स्वयं के पिताजी के विचारों से असहमत होने पर विरोध करने का पूर्ण अधिकार है, लेकिन विरोध करते समय शब्दों पर संयम रखते हुए, आदर के साथ अनुशासन रखते हुए,यह कह कर विरोध प्रकट करना चाहिए कि अध्यक्ष महोदय,या पिताजी मै आपके वक्तव्य से सहमत नहीं हूं। यह कहते हुए अपनी असहमति शालीन भाषा में प्रकट करना चाहिए।

मुख्य मुद्दा है भाषा की मर्यादा-

स्वतंत्रता सैनानियों ने भी भाषा की मर्यादा रखते हुए ही बरतानिया हुकूमत का विरोध किया है।

वाणी के महत्व को समझने के लिए संत कबीर साहब द्वारा रचित निम्न दोहा एकदम सटीक है-

ऐसी वाणी बोलिये, मन का आपा खोए।
औरन को शीतल करै, आप ही शीतल हुए

संतों ने साहित्यकारों ने अपने विचार निर्भीकता और बेबाक तरीके से प्रकट किए हैं।

संतों की कथनी करनी में अंतर नहीं था।

संत तुकाराम ने मराठी भाषा में लिखा है-

आधी केले मग संगीतले

अर्थात पहले स्वयं आचरण किया फिर कहा।

आचरण की शुद्धता भी सरल,सहज,और स्पष्ट भाषा से ही प्रमाणित होती है।

उपर्युक्त कथन पर गंभीरता से विचार करने पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्व समझ में आएगा।

सर्वप्रथम यह समझना जरूरी है कि स्वतंत्रता के लिए असंख्य,लोगों के द्वारा दिए गए बलिदान और कठिन संघर्ष के बाद अपना देश स्वतंत्र हुआ।

अपना देश विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र ने ही प्रत्येक नागरिक को वाणी की स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार दिया है।

वाणी की स्वतंत्रता का दुरुपयोग करने वालें स्वतंत्रता के लिए संघर्ष की कीमत और महत्व को समझते ही नहीं है या जिन्होंने स्वतंत्रता के संघर्ष में अपना योगदान दिया ही नहीं हो,वे लोग भाषा का दुरुपयोग कर स्वतंत्रता के संघर्ष के सैनानियों को अपमानित ही करते हैं।

भाषा को लेकर तो हज़ारों वर्षों से संघर्ष रहा है। संतों ने साहित्यकारों,विचारकों ने अंधविश्वास,दकियानूसी रूढ़ियों और यथास्थितिवाद के विरुद्ध आपनी सरल वाणी के माध्यम से लोगों को जागरूक किया है। ऐसे वैचारिक क्रांति के पुरोधाओं का विरोध संकीर्ण और कट्टरपंथी मानसिकता से ग्रस्त लोगों ने किया है। लेकिन संतों ने अपनी निर्भीकता बरकरार रखी। इस सूक्ति को प्रमाणित किया कि सत्य परेशान हो सकता है,लेकिन पराजित नहीं होता है। अभीव्यक्ति की स्वतंत्रता कभी भी दूसरी भाषाओं से द्विस्वभाव नहीं रखती है। इन दिनों अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की अवहेलना की जा रही है। अमर्यादित,अशोभनीय निम्न स्तर की भाषा का प्रयोग संवैधानिक पद पर विराजित लोग कर रहें हैं।

स्टैंडअप कॉमेडी

मनोरंजन के नाम पर स्टैंडअप कॉमेडी प्रस्तुत करने वाले युवा,युवा वर्ग के समक्ष स्तरहीन भाषा का प्रयोग कर वाणी की स्वतंत्रता का मज़ाक उड़ा रहें हैं। फिल्मों,और धारावाहिकों में भारतीय संस्कृति का ह्रास ही हो रहा है। फिल्म और धारावाहिक की पटकथा लिखने वालें भारतीय लोग कलम के माध्यम से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ खिलवाड़ कर रहें हैं। वैसे इन लोगों से उम्मीद करना भी व्यर्थ है। कारण हर क्षेत्र में परिवर्तन के लिए संघर्ष करने वालें हमेशा चंद लोग ही होते हैं। वैचारिक क्रांति भी भाषा से ही संभव है इसीलिए संघर्ष करने वाले अपने अभियान में निरंतर लगे ही रहतें हैं। सन १९४७ में देश की आबादी ३५ करोड़ थी तथापि सभी ३५ करोड स्वतंत्रता के संघर्ष में सक्रिय नहीं थे। आज हम १४७ करोड़ हैं लेकिन स्वतंत्रता के संघर्ष को भूलते जा रहे हैं। -इंदौर

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर हमला

विजय दलाल

जब वर्ष १९७५ में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने बढ़ती हुई हिंसक स्थिति का मुकाबला करने हेतु देश में आपातकाल की घोषणा की और उसे सख्ती से लागू किया तो उनकी तीखी आलोचना हुई।

आज देश अघोषित आपातकाल की स्थिति को भी पार कर चुका है। नये रचित महाभारत के दृश्य में कौरव यानी दुर्योधन दरबार में द्रोपदी की साड़ी को पुरी खिंच चुका है जिस कृष्णरुपी अदालत को द्रौपदी को बचाना था वह दुर्योधन के साथ खड़ा है और पांडवों रूपी जनता को राजपाट से दूर कर यानी उसके संविधान प्रदत्त नागरिक अधिकारों को छीनकर उसे वनवास में भेजने में शामिल है।

पिछले दिनों निचली अदालत से लेकर सर्वोच्च न्यायालय तक लोकतंत्र और संविधान की बुनियाद पर कार्पोरेट्स की सत्ता के इस हमले की कार्रवाई में अब अप्रत्यक्ष नहीं प्रत्यक्ष रूप से शामिल हो गया है यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

साधारण व्यक्ति जो कानून का जानकार भी नहीं हो तो पूछ सकता है कि छोटी सी अदालत को उसकी परिधि से बाहर जाकर एक सरकार के खास मित्र सेठ के पक्ष में ऐसा फैसला करने की हिम्मत कैसे हुई?

फैसले के तुरंत बाद सरकार के मंत्रालय द्वारा अडानी संबंधित कई यूट्यूब पर प्रसारित चैनलों को हटाने के नोटिस के साथ यूट्यूब को हटाने का आदेश इस बात की पुष्टि करता है कि स्थानीय अदालत को उसकी लक्ष्मण रेखा पार करने की हिम्मत किसने दी।

यह केवल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अंकुश भर नहीं है। यह कार्पोरेट्स की लोकतंत्र के चारों खंभों के पैड प्रतिनिधियों द्वारा उनकी नुमाइंदगी कर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर हमला है।

उधर दूसरी ओर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मतदाता के रूप में सबसे बुनियादी नागरिक अधिकार को भी छीनने की कवायद कैसी चल रही है। सर्वोच्च न्यायालय के विशेष मतदाता सूची गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) पर तारीख पर तारीख का मामले की सुनवाई हो या वक्फ पर अंतरिम फैसला हो या सरकार के दूसरे प्रिय मित्र जिनके विज्ञापनों में आकर हमारे विश्वगुरु देश की जनता के सामने अपनी दोस्ती की नुमाइश करते हों उनके वनतारा रिहेबलिटेशन सेंटर का मामला हो, साफ दिखाई देता है कि सर्वोच्च न्यायाधीश जस्टिस गोगोई से शुरू होकर जस्टिस चंद्रचूड़ तक हर फैसले में टिप्पणियां कुछ और फैसला उसके विपरीत सरकार के पक्ष में जो परंपरा डाली थी, उसी का निर्वाह वर्तमान न्यायाधीश कर रहे हैं। वनतारा मामले में तो उनसे भी आगे बढ़कर।

जिस अदालत को किसी प्रतिष्ठित मानवाधिकार कार्यकर्ता हो या अल्पसंख्यक समुदाय का उभरता छात्र नेता हो बगैर पर्याप्त प्रमाणों के ४-५ साल जेल काट चुकने के बाद जमानत की सुनवाई का समय न हो वो वनतारा के मामले में एसआईटी गठित कर बुलेट ट्रेन की गति से फैसला दे देती है। बंद लिफाफे की परंपरा फिर से शुरू कर कैसा अंतिम आदेश देती है? जानिएगा और इस धारणा को भी छोड़िएगा कि जब कार्पोरेट्स सत्ता का बोलबाला चल रहा हो तो सर्वोच्च पदों पर कोई आदिवासी या दलित बैठा होगा तो बाकी गरीब मेहनतकश सर्वहारा जनता को तो छोड़ो, वो उसके वर्ग या जाति के गरीब लोगों के हक में निर्णायक फैसले लेगा या लेने की हिम्मत करेगा?

जनता को न्याय और अधिकारों की रक्षा की जिम्मेदारी संविधान ने सर्वाधिकार संपन्न बना कर दी है, उसके आचरण से कतई आशा नहीं की जा सकती।

अब जनता और विपक्ष को अदालतों के भरोसे से अलग जनता को जागरूक करने के साथ लड़ने के नये तरीके इजाद करना पड़ेंगे।

सविनय अवज्ञा जैसे आंदोलन खड़े करने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं है।

देश में संसदीय लोकतंत्र को पुनर्स्थापित करने के लिए वर्तमान चल रहा आंदोलन वोट चोर गद्दी छोड़ तो है ही।

-इंदौर

मौलिक मानवाधिकार है अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

वंदना सहाय

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक मौलिक मानवाधिकार है, जो हर व्यक्ति को बिना किसी डर, रोक-टोक या सरकारी हस्तक्षेप के अपने विचार, राय और जानकारी को मौखिक, लिखित, कलात्मक या किसी अन्य माध्यम से व्यक्त करने, प्राप्त करने और साझा की आजादी देता है।

इसमें असहमति और अलोकप्रिय विचारों को भी शामिल किया जाता है लेकिन यह अधिकार निरपेक्ष नहीं है और देश की एकता, अखंडता, संप्रभुता, राष्ट्रीय सुरक्षा, सार्वजनिक सुरक्षा, नैतिकता, न्यायालय की अवमानना और मानहानि या दूसरों के अधिकार की रक्षा के लिए इस पर उचित प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं। यह संविधान के अनुच्छेद १९ (१) में वर्णित है।

उक्त अनुच्छेद भारत के सभी नागरिकों को वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है। इसमें किसी भी माध्यम से (मीडिया सहित मीडिया, जो विचारों के प्रचार का एक महत्वपूर्ण साधन है और वॉच-डॉग या चौकीदार की भूमिका निभाता है) विचारों को रखने, प्राप्त करने और प्रसारित करने की स्वतंत्रता है।

यह लोकतंत्र का आधार स्तंभ है, जिसे मौलिक अधिकारों का चार्टर ऑफ लिबर्टी कहा जाता है।

१९८७ से आर्टिकल १९ एक ऐसी दुनिया के लिए काम कर रहा है, जहाँ सभी लोग हर जगह खुद को स्वतंत्र रूप से व्यक्त कर सकें। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बोलने, सुने जाने और राजनीतिक, कलात्मक और सामाजिक जीवन में हिस्सा लेने का अधिकार है।

हम निम्नलिखित जगहों पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का प्रयोग करते हैं-

-जब हम अपने विचार साझा करते हैं या ऑनलाइन या ऑफलाइन जानकारी प्राप्त करते हैं

-जब हम अपनी सरकार की उसके वादों को पूरा न करने के लिए आलोचना करते हैं

-जब हम धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक या सांस्कृतिक प्रथाओं पर सवाल उठाते हैं या बहस करते हैं

-जब हम किसी शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन में भाग लेते हैं या उसका आयोजन करते हैं

-जब हम कोई कलाकृति बनाते हैं

-जब हम किसी समाचारलेख पर टिप्पणी करते हैं, चाहे हम समर्थन करें या उसकी आलोचना और जब पत्रकार लेख प्रकाशित करता है अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता राजनीतिक असहमति, विभिन्न सांस्कृतिक अभिव्यक्ति, रचनात्मकता और नवाचार के माध्यम के साथ-साथ आत्म अभिव्यक्ति के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिए मौलिक है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता संवाद को संभव बनाती है, समझ विकसित करती है और जन ज्ञान को बढ़ाती है। जब हम स्वतंत्र रूप से विचारों और सूचनाओं का आदान-प्रदान करते हैं तो हमारा ज्ञान बढ़ता है, जिससे हमारे समुदायों और समाजों को लाभ पहुँचता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हमें अपनी सरकारों से सवाल करने का अधिकार देती है, जिससे उन्हें जवाबदेह बनाए रखने में मदद मिलती है। सवाल करना और बहस करना स्वस्थ प्रकृति है, इससे बेहतर नीतियों और अधिक स्थिर समाज का निर्माण होता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सभी मानवाधिकारों के आनंद और संरक्षण के लिए आवश्यक है।

प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक समाज, प्रत्येक समुदाय, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के साथ अपनी सबसे मूलभूत आवश्यकता की माँग कर सकता है।

जैसे-

पानी, भोजन, आश्रय और स्वच्छ हवा

स्वास्थ्य सेवा, हमारे बच्चों के लिए शिक्षा, सम्मान जनक काम और उचित वेतन

अपने पसंद के धर्म का पालन करने या

किसी भी धर्म को न मानने की स्वतंत्रता के लिए, अपनी इच्छानुसार प्रेम करने और विवाह करने के लिए, दुख में पड़े लोगों के साथ एकजुट हो खड़े रहने के लिए और कानून के समक्ष अमीर और गरीब दोनों के साथ समान व्यवहार किया जाए।

दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतंत्र की जीवन रेखा है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार मौलिक है, पर निरपेक्ष नहीं है। यानि, असाधारण परिस्थितियों में इसे सीमित किया जा सकता है।

यह समझना अत्यंत आवश्यक है कि हम निम्नलिखित के बीच अंतर कर सके-

हिंसा और लोगों के खिलाफ भेदभाव को बढ़ावा देने वाले भाषण (जैसे जानबूझकर नस्लीय घृणा भड़काना) पर प्रतिबंध लगाना चाहिए; और वह भाषण जो विचारों या यथास्थिति की आलोचना या चुनौती देता है (जैसे किसी सरकार, राष्ट्र या धार्मिक विचार की आलोचना करना), उसे संरक्षित किया जाना चाहिए- भले ही वह आपत्तिजनक या अलोकप्रिय हो- क्योंकि यह हमें विभिन्न विचारों के बारे में जानने और सत्ता में बैठे लोगों को चुनौती देने का अवसर देता है।

धर्मों, सरकारों और झंडों को नुकसान नहीं पहुँचाया जा सकता है- नुकसान केवल मनुष्यों को ही पहुँचाया जा सकता है। इसलिए मानवाधिकार लोगों की रक्षा करतें हैं- विचारों, राज्यों और धर्मों की नहीं।

इस प्रकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कोई भी प्रतिबंध केवल लोगों को नुकसान से बचाने के लिए होना चाहिए, न कि सरकारों को आलोचना से बचाने के लिए।

सबसे कम शक्ति वाले लोगों को ही सबसे अधिक सुरक्षा की आवश्यकता होती है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता अंतरराष्ट्रीय कानून के तहत संरक्षित है।

मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा का अनुच्छेद १९ और नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों का अंतर्राष्ट्रीय संधि का अनुच्छेद (१९) यानी इसका मतलब यह है कि दुनिया के लगभग हर राज्य पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार की रक्षा करने का दायित्व है।

अंतरराष्ट्रीय प्रतिवेदकों की संयुक्त घोषणा (२०२१) के अनुसार- राजनेताओं और सार्वजनिक अधिकारियों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए अनुकूल वातावरण बनाना चाहिए, न कि इसे कम करना चाहिए।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हम सभी के लिए इतनी मौलिक है कि हम सभी का इसके लिए खड़े होने का दायित्व है।

कुछ लेखकों के शब्दों में-

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता क्या है? अपमान करने की स्वतंत्रता के बिना, इसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है

-सलमान रुश्दी, उपन्यासकार और प्रोफेसर

वास्तव में आवाजहीन जैसी कोई चीज नहीं होती। केवल जानबूझकर चुप कराए गए लोग होते हैं, या जानबूझकर अनसुने किए जाने वाले लोग होते हैं।

-अरुंधति रॉय, लेखिका

सत्ता में बैठे लोगों की अक्सर यही प्रतिक्रिया होती है, आप ऐसा नहीं कह सकते। जब उनकी सत्ता को चुनौती दी जाती है। यह स्वीकार करना कि कुछ बातें नहीं कहीं जा सकतीं, इसका अर्थ है कि सत्ता के कुछ रूपों को चुनौती नहीं दी जा सकती।

-केनन मलिक, लेखक, व्याख्याता और प्रसारक

लोकतंत्र असहमति के आधार पर, लोगों को विपरीत विचार रखने के अधिकार पर आधारित है। हमारे समाजों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की आवश्यकता है, ताकि वे सरकारों द्वारा अपने नागरिकों पर किए जाने वाले सबसे जघन्य अत्याचारों से स्वयं को बचा सकें।

- बेन ओकरी, कवि और उपन्यासकार

संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हमें अपनी बात कहने की आज़ादी देती है, लेकिन यह जिम्मेदारी के साथ आती है और समाज तथा कानून द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर रहकर ही इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

-नागपुर

पचास साल पूरे हुए !

अम्बरीष तिवारी

कुछ नींद में डूबे हुए से
कुछ प्रमाद में भीगे हुए से
खेल कूद में भागे हुए से
काम में पागल हुए से
पचास साल पूरे हुए !!
बचपन की मस्ती में,जवानी
की कश्ति में,
मदहोश सी हस्ती
में,कौड़ियों जैसी सस्ती में,
पचास साल पूरे हुए ।
बेकार सी डिग्री में बुझे कोयलों की सिगड़ी में,
शादी, ब्याह, बच्चों में कारपोरेट की गर्म राहों में
मकान , पैसों की चाहो में पचास साल पूरे हुए ,
जो बीत गया वो सपना लगता वो बहुत अपना था
उस सपने में मां थी और दादी भी , दादा भी,
मामा भी थे, मामी भी, और थे ढेर सारे रिश्तेदार
वो सब बिछड़ गए वहां, नहीं दिखता जिसके पार!
दिवाली के दिए बुझते हुए से
पचास साल पूरे हुए !
वानप्रस्थ सामने खड़ा है,
मुस्कुराता सा वो अड़ा है, कहता है ,
जीवन तेरा आधा चल पड़ा है,
देख, तेरे सामने वानप्रस्थ आ खड़ा है।
क्यों अब तक तू व्यर्थ लड़ा है,
तेरी आंखों में रंगीन चश्मा अब भी चढ़ा है !
उतार फेक ये चश्मा
नहीं वहां कोई चांदनी या रेशमा
मिट जाता है ये समा
भोग का तुझको है जो दमा
अब चल मेरे साथ कुछ पुण्य कमा
ये वानप्रस्थ के बोले हुए
दिल के द्वार खोले हुए
बीते जीवन को भूले हुए
अंबरीष उठ जा अब पचास साल पूरे हुए

-इंदौर

लोकतंत्र की आत्मा है अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

मनोज चतुर्वेदी 'आनंद'

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता यदि सकारात्मक और पूर्ण रूप से प्रयोग की जाए, तो वह समाज, राष्ट्र और परिवार—तीनों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अभिव्यक्ति अपने विचारों को खुलकर रखने का माध्यम है। जब व्यक्ति अपने विचारों को स्वतंत्रता के साथ समाज और अपने संबंधों में प्रस्तुत करता है, तो उसकी एक अलग पहचान और परिभाषा बनती है।

यह भी अत्यंत महत्वपूर्ण है कि अभिव्यक्ति कौन कर रहा है, वह किस पद पर है, किस स्थान पर है और किस जिम्मेदारी के साथ अपने विचार रख रहा है। सामान्य नागरिकों की अभिव्यक्ति का प्रभाव प्रायः सीमित होता है, किंतु जब अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर बिना विवेक के आचरण किया जाता है—जैसे सड़कों पर धरना-प्रदर्शन, अव्यवस्था फैलाना—तो उसका प्रतिकूल प्रभाव आमजन पर पड़ता है। कई बार लोग यह नहीं सोचते कि उनकी अभिव्यक्ति से समाज के अन्य वर्गों को कितनी असुविधा हो रही है।

निस्संदेह, किसी महत्वपूर्ण मुद्दे पर अपनी बात रखना आवश्यक है, किंतु यह भी उतना ही आवश्यक है कि बात रखने का तरीका संवेदनशील और जिम्मेदार हो। यदि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रयोग से आम जनता को कष्ट, बाधा या अव्यवस्था उत्पन्न होती है, तो उस स्वतंत्रता का मूल उद्देश्य कहीं न कहीं समाप्त हो जाता है।

इसके विपरीत, जब जिम्मेदार पदों पर बैठे व्यक्ति, विचारक, लेखक, चिंतक या समाजसेवी अपने विचार रखते हैं, तो समाज में सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिलता है। किंतु वर्तमान समय में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रतिबंध लगाए जा रहे हैं। अनेक बार जब समाज में फैली विसंगतियों, अत्याचारों या अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई जाती है, तो शासन और प्रशासन द्वारा उन आवाज़ों को दबाने का प्रयास किया जाता है।

आज विश्व के कई देशों में युद्ध और संघर्ष की स्थिति बनी हुई है—कहीं बाहरी आक्रमण है तो कहीं आंतरिक व्यवस्थाओं के विरुद्ध जन संघर्ष। ऐसे में जिन लोगों ने जन आंदोलन का मार्ग चुना, उन्हें अक्सर शक्तिशाली शासकों द्वारा दबाया जाता है, जिससे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बाधित होती है।

निश्चय ही, वहाँ अभिव्यक्ति पर प्रतिबंध आवश्यक हो सकता है जहाँ उससे समाज, राष्ट्र, व्यक्ति या मानवता को क्षति पहुँचती हो। परंतु जब अभिव्यक्ति का उद्देश्य मानवता की रक्षा, पर्यावरण और प्रकृति का संरक्षण, समाज का कल्याण, संस्कृति और राष्ट्र के मूल्यों की सुरक्षा हो—तब अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता अत्यंत आवश्यक हो जाती है।

समाज के प्रत्येक वर्ग को मिलकर यह प्रयास करना चाहिए कि सकारात्मक, रचनात्मक और जनकल्याणकारी विचारों पर किसी भी प्रकार का प्रतिबंध न लगे। शासन और सत्ता किसी की भी हो, किंतु जो लोग स्पष्ट, सकारात्मक और समाधानपरक सुझाव रखते हैं, उन्हें अभिव्यक्ति की पूरी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए।

अतः यह स्पष्ट है कि एक सशक्त, स्वस्थ और जीवंत लोकतंत्र की स्थापना के लिए अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता अनिवार्य है। यही स्वतंत्रता समाज को जागरूक बनाती है, सत्ता को जवाबदेह करती है और लोकतंत्र को मजबूती प्रदान करती है। -भोपाल

बस प्रतिध्वनि

सरिता गर्ग 'सरि'

तुम्हारी स्मृतियाँ आज भी
ओस की नन्हीं बूँदों सी
मेरी पलकों पर ठहरी हैं,
पर स्पर्श तुम्हारा—
मानो दूर के किसी तारे से
झरती शीतल किरण हो।

अभी कल ही तो तुम थे यहाँ,
श्वासों के गुप्त संवाद में,
अधरों की मौन लहरों में,
पर आज यह रिक्त नयन-सीमा,
यह गूंगा आकाश,
बस प्रतिध्वनि छोड़ गया।

मेरी बाँहों के वलयों में
जो स्वर गूँजते थे, अब वही स्वर
अधीर पवन बनकर
शाखों को झकझोरते हैं।

ओ प्राण!
क्या सचमुच दूरी ही
मिलन की एकमात्र नियति है?
क्या यही नियति है कि
हर आँसू के भीतर तुम्हारी छाया बनूँ
और हर हँसी के क्षण में
अपने ही स्वर को अनसुना करूँ?

मैं तो अब भी
तुम्हारी प्रतीक्षा में हूँ,
जैसे सूनी वेणी में
नागफनी का फूल—
न खिलने की आशा,
न मुरझाने का साहस
आओ और उबार लो मुझे। -भिवाड़ी (राजस्थान)

दुरूपयोग रोकें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का

आशा लता दुबे

हम भारतीय एक ऐसे देश के निवासी जहां हमें हर प्रकार की स्वतंत्रता है, चाहे वह खानपान की हो, परिधान की हो, भाषा की हो, या अपने विचारों को व्यक्त करने की हो,तभी तो हम मीडिया में खुल्लम खुल्ला एक दूसरे से बहस करते, आरोप प्रत्यारोप लगाते दिखते हैं, हम कभी इसे बुरा नहीं मानते हैं।

सनातन धर्म हमेशा ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का समर्थक रहा है। हमने अपने धर्म ग्रंथों में दी गई उन बातों पर भी सवाल उठाए जिन पर हमें कोई समझ नहीं थी, बिना जानकारी और ज्ञान के जब हम अपने बुजुर्गों से बहस करते थे तो वे हमें धैर्य से समझाते थे हमारी जिज्ञासाओं को शांत करते थे परंतु उन्होंने कभी भी हमारी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को नहीं बांधा, कभी कमजोर नहीं किया, हमारे मन और विचारों को स्वतंत्र रूप से उड़ने दिया कभी उसके पर नहीं काटे।

पहले हम सोचते थे कि पुष्पक विमान की बात झूठी है किसने देखा है कि कोई पुष्पक विमान था,पहले हम सोचते थे कि अंधे धृतराष्ट्र को महाभारत की लड़ाई का वर्णन संजय द्वारा घर बैठे करने की बात मनगढ़ंत होगी, परंतु बाद में वायुयान का आविष्कार हुआ और टीवी का आविष्कार हुआ तब हमें समझ में आया कि हमारे धर्म ग्रंथों में जो-जो लिखा गया था वह सच था, यह हमारी ही नासमझी थी कि हम हमेशा प्रश्न चिन्ह उठाते रहे, वास्तव में सनातन धर्म में कभी भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को रोका नहीं गया, अभिव्यक्ति की आजादी को कुचला नहीं गया, हमें कभी भी कुछ भी सोचने से रोका नहीं गया चाहे वह बात धर्मग्रंथ के विरुद्ध हो ।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जरूरी है। हम मन को बेड़ियों में नहीं बांध सकते। किसी को धर्म की दुहाई देकर या अधर्मी कहकर उसे प्रश्न उठाने से नहीं रोक सकते। अगर हम ऐसा करने लगेंगे तो जिस तरह ठहरे हुए तालाब का पानी गंदा हो जाता है उसी तरह हमारे मन और मस्तिष्क का विकास भी अवरुद्ध हो जाएगा और उसमें गंदगी के अलावा फिर कुछ नहीं बचेगा परंतु आजकल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग मन और बुद्धि के विकास के लिए नहीं किया जा रहा है, आजकल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग दूसरों को धमकाने,डराने और बुरा बोलकर अपनी मन की कुंठा निकालने के लिए किया जा रहा है।

कोई भी प्रतिपक्ष का नेता या एक अदना सा आदमी भी, हमारे राष्ट्र के सर्वोच्च पद पर बैठी महामना राष्ट्रपति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर कुछ भी बुरा बोल कर निकल लेता है। प्रधानमंत्री को भी गालियां दी जाती हैं । सरकारी काम में खुल्लमखुल्ला बाधा डाली जाती है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग कर जाकिर नायक जैसे लोग दूसरों को काफिर बोलते हैं, दूसरे धर्मों पर आघात करते हैं,उग्रवाद और आतंकवाद फैलाते हैं । इनके लिए इनकी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता केवल एक तरफा होती है , इनके धर्म के बारे में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जैसी कोई बात नहीं है, दूसरा तो छोड़ो वो खुद भी कोई सवाल नहीं कर सकते ,सवाल तो दूर की बात है सही-गलत के बारे में सोच भी नहीं सकते।

कन्हैया लाल को जिस तरह अपनी अभिव्यक्ति करने पर इन्होंने मार डाला था, उससे पता पड़ता है कि यह केवल अपने लिए अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का लाभ उठाना चाहते हैं , दूसरों के लिए इनकी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कुछ भी नहीं है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की सीमा होना चाहिए।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता वहां जरूरी है, जहां आदर्शों की स्थापना के लिए, सामाजिक विसंगतियों को दूर करने के लिए, चिंतन किया गया हो जैसे महादेवी वर्मा ने किया था। जैसे राजा राममोहन राय ने किया था, स्वामी विवेकानंद ने किया था। उन्होंने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग कर अपने आप को और समाज को उठाने का कार्य किया, ना कि किसी को नीचा दिखाने और धर्म विशेष पर जहर उगलने का, मगर हम यहां देखते हैं कि लोकतंत्र और स्वतंत्रता के पक्षधर अरुंधती राय, वृंदा करांत जैसे कम्युनिस्ट नेता इसका गलत उपयोग करते हैं। ये सत्ता की खातिर, सत्ताधारी पार्टी का विरोध करते-करते राष्ट्र विरोधी बन जाते हैं। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक शक्ति है और किसी भी शक्ति का दो तरीके से उपयोग किया जा सकता है।

अगर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग समाज के उत्थान के लिए किया जाए, नैतिक मूल्यों की स्थापना के लिए किया जाए तो वह एक अच्छी बात होगी परंतु अगर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग जहर उगलने, दूसरों के प्रति बुरा बोलने में किया जाता है तो वह सहन नहीं किया जाना चाहिए और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की एक सीमा जरूर तय की जानी चाहिए।

-भोपाल

संकट में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

द्रौपदी साहू

संविधान निर्माताओं ने बहुत ही सूझ-बूझ के साथ भारतीय संविधान का निर्माण किया है। उन्होंने अपने अनुभव और दूरदृष्टि से पहले ही भाँप लिया था कि लोगों के समक्ष कैसी-कैसी परिस्थितियाँ पैदा होंगी। उन संभावित परिस्थितियों को ध्यान में रखकर और विभिन्न देशों के संविधानों के अध्ययन पश्चात सुव्यवस्थित ढंग से भारतीय संविधान का निर्माण किया गया।

भारतीय संविधान २६ नवंबर १९४९ को संविधान सभा द्वारा अंगीकृत किया गया और २६ जनवरी १९५० को लागू किया गया। भारतीय संविधान विश्व का सबसे लंबा लिखित संविधान है, जिसमें मूल रूप से ३९५ अनुच्छेद और ८ अनुसूचियाँ थीं। भारतीय संविधान द्वारा भारत के नागरिकों को उनके व्यक्तित्व के विकास और गरिमा की रक्षा के लिए छः मौलिक अधिकार दिए गए जिनमें समानता का अधिकार , स्वतंत्रता का अधिकार, शोषण के विरुद्ध अधिकार, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार, संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार, और संवैधानिक उपचारों का अधिकार शामिल हैं। इन मौलिक अधिकारों के उल्लंघन होने पर नागरिक न्यायालय की शरण लेकर अपने मौलिक अधिकारों की माँग कर सकता है।

संविधान द्वारा दिए गए छः मौलिक अधिकारों में दूसरा मूल अधिकार है- स्वतंत्रता का अधिकार जो कि अनुच्छेद १९ से अनुच्छेद २२ तक वर्णित है। इसमें अनुच्छेद १९ के अंतर्गतवाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, शांतिपूर्वक और बिना हथियार के एकत्र होने, संघ या संगठन बनाने, भारत के पूरे क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से घूमने, भारत के किसी भी भाग में निवास करने और बसने, कोई भी पेशा, व्यवसाय या कारोबार करने की स्वतंत्रता शामिल है। इसमें वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता अर्थात् बोलने या बातचीत करने तथा अपनी भावनाओं और विचारों को बिना किसी डर के व्यक्त करने की स्वतंत्रता है।

यह व्यक्ति के दैनिक जीवन का अभिन्न हिस्सा है। इसके बिना व्यक्ति गुलाम है। उसका अपना कोई अस्तित्व नहीं। आज के दौर में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता संकट में है। यह कानून और कागजों की ही शोभा बढ़ा रहा है। व्यवहार में बहुत कम लोग हैं जो निष्पक्ष और स्वतंत्र रूप से बिना किसी भय के अपनी बात कह पाते हैं। ऐसे लोग हमेशा निशाने पर रहते हैं।

क्योंकि वे सच्चे समीक्षक होते हैं। वे जब गलत होते हुए देखते-सुनते हैं तो आवाज़ उठाते हैं। उसका विरोध करते हैं। चाहे वे भाषण, गीत-गज़ल, कविता या लेख आदि किसी भी माध्यम से अपना विरोध व्यक्त करें।

आज सच कहने वालों की आवाज़ दबा दी जाती है या उनपर सख्त कार्रवाई की जाती है। उनका जीवन नर्क बना दिया जाता है। उन्हें हर तरह से प्रताड़ित कर अपने उसूलों से भी समझौता करने के लिए मजबूर किया जाता है।

इतनी भयावह स्थिति पैदा हो चुकी है। आज सरकार लोकहित से ज्यादा स्वहित में लगी हुई है इसीलिए जहाँ कहीं भी उनकी गलत नीतियों या कार्यों को लेकर बात होती है और विरोध के स्वर उठने लगते हैं। उन पर लगाम लगाने के लिए उन्हें बंदी बना लिया जाता है और दूसरों के मन में भी भय उत्पन्न करने की कोशिश की जाती है ताकि कोई भी उनके खिलाफ कुछ न बोल सके और अगर कोई कुछ बोल पड़े तो उसका नतीजा सजा के रूप में भुगतने को तैयार रहे।

सरकारी नौकरी करने वाले सरकार के खिलाफ या किसी संस्था में काम करने वाले उस संस्था के विरुद्ध कुछ नहीं बोल सकते क्योंकि उनकी आजीविका का सबसे बड़ा प्रश्न है और यदि बोल पड़ते हैं तो नौकरी से निकाल दिये जायेंगे।

इनके अलावा साहित्यकार या शिक्षक, लोगों को अपने शब्दों से जागरूक करने की कोशिश करते हैं तो उनपर भी लोगों को भड़काने और देशद्रोह का आरोप लगाकर जेल भेज दिया जाता है।

आज अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता संकट में है क्योंकि व्यक्ति किसी न किसी कारण से सत्ता पर निर्भर है उसके खिलाफ कोई बात कह नहीं सकता और कहता है तो उसे सजा भुगतने के लिए तैयार रहना पड़ेगा इसलिए वह चुपचाप हर सही-गलत चीजों को देखता रहता है कुछ कहता नहीं।

मौलिक अधिकारों के हनन होने पर वह न्यायालय से भी अपील नहीं करता क्योंकि यहाँ भी न्याय नहीं मिलता। न्याय की आस में वर्षों बीत जाते हैं और कभी-कभी व्यक्ति स्वर्गवासी हो जाता है फिर भी उसकी फाइल वहीं की वहीं रहती है। जहाँ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की आवश्यकता सबसे अधिक है, वहीं व्यक्ति सबसे कमजोर पड़ जाता है और समझौता कर लेता है।

-कोरबा, छत्तीसगढ़

जब संसद में टूट रही अभिव्यक्ति की मर्यादा

डॉ. प्रियंका सौरभ

भारतीय संसद की कार्यवाही ने लोकतंत्र की उस बुनियादी शर्त पर गहरे प्रश्नचिह्न खड़े कर दिए हैं, जिसे हम समानता, गरिमा और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कहते हैं। संसद केवल कानून बनाने की जगह नहीं होती, बल्कि वह वह मंच होती है जहाँ लोकतंत्र की आत्मा बोलती है लेकिन जब उसी मंच पर निर्वाचित प्रतिनिधि अपनी बात निर्बाध रूप से नहीं रख पा रहे हों, तो यह केवल संसदीय अव्यवस्था नहीं रह जाती, बल्कि लोकतांत्रिक चेतना के क्षरण का संकेत बन जाती है।

यह स्थिति इसलिए भी अधिक चिंताजनक है क्योंकि संसद वह संस्था है, जिससे पूरे समाज को दिशा मिलती है। यदि यहाँ शोर, व्यवधान, व्यक्तिगत हमले और लक्षित अपमान सामान्य होते जा रहे हैं, तो यह संदेश केवल संसद तक सीमित नहीं रहता—यह पूरे समाज में असहिष्णुता और अराजकता को वैधता देता है।

संसद में सवाल पूछना विपक्ष का अधिकार है—बल्कि लोकतंत्र में यह उसका कर्तव्य है लेकिन सवालों का स्वर, भाषा और उद्देश्य भी लोकतांत्रिक मर्यादा के भीतर होना चाहिए। जब प्रश्न नीति, प्रशासन और जनहित की जगह व्यक्तिगत पहचान, सामाजिक वर्ग या जातिगत संकेतों की ओर मुड़ने लगें, तो यह विमर्श नहीं, बल्कि विभाजन की राजनीति बन जाती है।

यह प्रवृत्ति न केवल संसद की गरिमा को ठेस पहुँचाती है, बल्कि समाज को भी वही संदेश देती है कि सत्ता के शीर्ष पर पहुँचने के बाद भी व्यक्ति जातिगत खाँचों से मुक्त नहीं हो सकता। इसका असर केवल राजनीतिक नहीं होता, इसका सामाजिक प्रभाव भी गहरा होता है—यह उन करोड़ों लोगों को निराश करता है जो लोकतंत्र को सामाजिक न्याय का माध्यम मानते हैं।

एक सौ चालीस करोड़ की आबादी वाले देश में संसद केवल कानून बनाने की जगह नहीं है; वह लोकतंत्र का नैतिक केंद्र है। यही वह स्थान है जहाँ असहमति को सम्मान मिलना चाहिए, जहाँ बहस होनी चाहिए लेकिन अपमान नहीं, जहाँ टकराव हो लेकिन हिंसक भाषा नहीं। यदि उसी केंद्र में निर्वाचित प्रतिनिधियों की सुरक्षा, सम्मान और अभिव्यक्ति सुनिश्चित नहीं हो पा रही, तो यह तंत्र की गंभीर विफलता है।

यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या संसद के भीतर अनुशासन केवल काग़ज़ों तक सीमित रह गया है? क्या सदन की कार्यवाही बाधित करना, योजनाबद्ध शोर मचाना और संवैधानिक प्रक्रियाओं को रोकना अब राजनीतिक रणनीति का हिस्सा बन चुका है? और यदि ऐसा है, तो क्या इसके लिए कोई स्पष्ट और कठोर जवाबदेही तय की जाएगी?

आज विश्वविद्यालयों, कॉलेजों और सार्वजनिक संस्थानों के लिए आचार-संहिताएँ बनाई जाती हैं—छात्रों और शिक्षकों से अपेक्षा की जाती है कि वे मर्यादा और अनुशासन में रहें। लेकिन क्या यह विडंबना नहीं है कि संसद, जो इन नियमों को बनाने वाली संस्था है, स्वयं अनुशासनहीनता का उदाहरण बनती जा रही है? क्या संसद के लिए भी किसी सख़्त आचार-संहिता की आवश्यकता नहीं है, जो केवल काग़ज़ पर नहीं, व्यवहार में लागू हो?

यह बहस किसी एक पद, व्यक्ति या राजनीतिक दल तक सीमित नहीं है। यह उस मानसिकता का प्रश्न है, जो आज भी व्यक्ति को उसकी संवैधानिक भूमिका से पहले उसकी जाति में बाँधकर देखती है। राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री—दोनों पद संविधान से शक्ति पाते हैं, न कि किसी सामाजिक श्रेणी से। फिर भी, जब सदन के भीतर और बाहर उन्हें उसी पुरानी दृष्टि से देखा जाता है, तो यह लोकतंत्र की आत्मा पर सीधा आघात है।

हम अक्सर गर्व से कहते हैं कि भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। लेकिन लोकतंत्र केवल संख्या से बड़ा नहीं होता, उसकी गुणवत्ता भी मायने रखती है। यदि लोकतंत्र के सबसे बड़े मंच पर ही समानता और सम्मान सुनिश्चित नहीं हो पा रहे, तो यह आत्ममंथन का समय है।

देश ने बीते दशकों में विकास, तकनीक और वैश्विक पहचान के अनेक पड़ाव पार किए हैं। हम अंतरिक्ष में पहुँच गए, डिजिटल अर्थव्यवस्था बना ली, वैश्विक मंचों पर अपनी आवाज़ बुलंद की। लेकिन सामाजिक समानता की कसौटी पर आज भी हम बार-बार फिसलते दिखाई देते हैं। जाति, पहचान और पूर्वाग्रह आज भी हमारे सार्वजनिक जीवन को नियंत्रित करते हैं।

यदि संसद स्वयं इस सोच से मुक्त नहीं हो पाती, तो समाज से परिवर्तन की अपेक्षा करना व्यर्थ है। संसद को केवल कानून बनाने वाली संस्था नहीं, बल्कि उदाहरण प्रस्तुत करने वाली संस्था बनना होगा। यहाँ जो आचरण होगा, वही समाज में आदर्श माना जाएगा।

इसलिए यह समय है कि संसद की गरिमा, समानता और कार्यवाही की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए स्पष्ट, पारदर्शी और कठोर नियमों पर गंभीर विचार किया जाए। ऐसे नियम जो सत्ता पक्ष और विपक्ष—दोनों पर समान रूप से लागू हों। ऐसे नियम जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को दबाएँ नहीं, लेकिन अराजकता को भी अनुमति न दें।

लोकतंत्र की मजबूती शोर से नहीं, संवाद से आती है; अवरोध से नहीं, असहमति के सम्मान से आती है। संसद को फिर से वही स्थान बनना होगा, जहाँ विचार टकराएँ, लेकिन व्यक्ति अपमानित न हो; जहाँ सत्ता और विपक्ष आमने-सामने हों, लेकिन संविधान सर्वोपरि रहे। यदि संसद ही मर्यादा तोड़ेगी, तो देश से मर्यादा की अपेक्षा कैसे की जा सकती है? यही प्रश्न आज भारतीय लोकतंत्र के सामने सबसे बड़ी चुनौती बनकर खड़ा है। तभी लोकतंत्र अपनी वास्तविक अर्थवत्ता में जीवित रह पाएगा।

हिसार, हरियाणा

नेपाल में संसदीय चुनाव और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

विनोदकुमार विश्वकर्मा

लोकतंत्र में चुनावों को मानवाधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए एक प्रभावी हथियार माना जाता है । लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में चुनावों को जनता में निहित संप्रभुता का वास्तविक प्रयोग माना जाता है । चुनावों के माध्यम से नागरिक एक विशिष्ट अवधि और शर्तों के लिए अपने अधिकारों को सार्वजनिक प्रतिनिधियों को सौंपते हैं ।

सामान्य तौर पर चुनाव से तात्पर्य सही और गलत के बीच अंतर करने, चुनने और चयन करने की क्रिया से है । दो या दो से अधिक उम्मीदवारों में से एक या अधिक व्यक्तियों को चुनने या निर्वाचित करने की प्रक्रिया को चुनाव माना जाता है । यह सत्ता हस्तांतरण का एक कम जोखिम वाला, शांतिपूर्ण और प्रभावी, कानूनी रूप से स्वीकार्य तरीका है।

चुनाव राजनीतिक नेतृत्व को नियंत्रित करने और नागरिकों को जिम्मेदारी से कार्य करने के लिए प्रेरित करने का काम करते हैं। एक मतदान प्रक्रिया है जिसमें आम जनता यह तय करती है कि संसद, विधायी निकायों आदि जैसी प्रतिनिधि संस्थाओं में राष्ट्र के लिए काम करने वाले शासी निकाय में कौन - कौन शामिल होना चाहिए । देश का प्रत्येक नागरिक 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद मतदान कर सकता है ।

स्थानीय चुनावों का इतिहास- नेपाल में औपचारिक चुनावों का इतिहास लगभग साढ़े सात दशक पुराना है । नेपाल में पहले स्थानीय निकाय चुनाव 11 जून, 1947 को हुए थे । काठमांडू के शहरी क्षेत्रों के लोगों ने अपने प्रतिनिधियों को चुनने के लिए मतदान किया । ये चुनाव राणा प्रधान मंत्री जुद्धशमशेर जंगबहादुर राणा के आदेश पर आयोजित किए गए थे । चुनाव आयोग द्वारा सन् 2016 में प्रकाशित पुस्तक 'नेपाल के चुनावों का इतिहास' के अनुसार, यह चुनाव निर्वाचित नगरपालिकाओं की स्थापना के उद्देश्य से आयोजित किया गया पहला और ऐतिहासिक चुनाव था । इस चुनाव में महिलाओं को वोट देने का अधिकार नहीं था। प्रतिनिधियों का चुनाव उपस्थित पुरुषों द्वारा किया गया था । सन् 1950 में लोकतंत्र की स्थापना के बाद, 2 सितम्बर, 1953 को काठमांडू नगर निगम चुनाव हुए। इस चुनाव में महिलाओं को पहली बार मतदान का अधिकार मिला । पांच पार्टियों के साथ - साथ स्वतंत्र उम्मीदवारों ने भी भाग लिया । हर चार साल में नगरपालिका चुनाव कराने की व्यवस्था के अनुसार, काठमांडू नगरपालिका का अगला चुनाव 20 जनवरी, 1958 को हुआ था । नगरपालिका के 18 वार्ड सदस्यों के पदों के लिए 49 उम्मीदवारों ने नामांकन दाखिल किया।

तत्कालीन राजा महेंद्र द्वारा 15 दिसम्बर, 1960 को पंचायत प्रणाली शुरू करने के बाद, उन्होंने 18 फरवरी, 1962 को ग्राम पंचायत चुनाव कराए । ग्राम सभा के अंतर्गत वार्डों से निर्वाचित सदस्यों में से प्रधान पंच और उप-प्रधान पंच का चुनाव करने की व्यवस्था थी । ग्राम सभा को 9 वार्डों में विभाजित किया गया था । 10,000 से अधिक आबादी वाले शहर में नगर पंचायत की स्थापना की अनुमति देने वाले प्रावधान के अनुसार, नगर पंचायत के चुनाव सन् 1962 में आयोजित किए गए थे ।

चुनाव आयोग द्वारा आयोजित इस पहले चुनाव में यह प्रावधान था कि उम्मीदवारों को 50 रुपये जमा करने होंगे और यह भी प्रावधान था कि उम्मीदवारों को उनकी पसंद का चुनाव चिह्न उपलब्ध कराया जाएगा । उसी वर्ष जिला पंचायत के चुनाव भी हुए । ये चुनाव गुप्त मतदान के माध्यम से हुए, जिसमें एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और 9 सदस्यों वाली 11 सदस्यीय कार्यकारी समिति का चुनाव किया गया । इसके अतिरिक्त, इस वर्ष अंचल (क्षेत्रीय) पंचायत चुनाव भी आयोजित किए गए थे । इसमें यह प्रावधान था कि इस क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली जिला पंचायतों के सदस्य स्वतः ही सदस्य बन जाते थे । इसमें एक अंचल (क्षेत्रीय) पंचायत के गठन का प्रावधान था जिसमें एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और नौ सदस्य होंगे ।

ग्राम पंचायतों और नगर पंचायतों के चुनाव मई 11, 14, 17 और 18, 1982 को, जिला पंचायतों के चुनाव 16 जून, 1982 को, ग्राम पंचायतों और नगर पंचायतों के चुनाव मार्च 21 और 24, 1987 को तथा जिला पंचायतों के चुनाव 9 मई, 1987 को हुए थे ।

लोकतंत्र की बहाली के बाद, ग्राम विकास समिति और नगरपालिका के लिए स्थानीय निकाय चुनाव 28 और 31 मई, 1992 को आयोजित किए गए थे । जिला विकास समिति के चुनाव जून 27, 1992 को, ग्रामीण नगरपालिका और नगरपालिका के चुनाव मई 17 और 26, 1997 को और जिला विकास समिति के चुनाव जुलाई, ग्राम पंचायतों और नगर पंचायतों के चुनाव मई 11 और 14 और मई 17

और 18, 1982 को, जिला पंचायतों के चुनाव 16 जून 1992 को, ग्राम पंचायतों और नगर पंचायतों के चुनाव मार्च 21 और 24,1987 को तथा जिला पंचायतों के चुनाव मई 9, 1987 को हुए थे।

लोकतंत्र की बहाली के बाद, ग्राम विकास समिति और नगरपालिका के लिए स्थानीय निकाय चुनाव मई 28 और 31, 1992 को और जिला विकास समिति के चुनाव जून 27, 1992 को आयोजित किए गए थे । अप्रैल 20 और जून 4, 2011 को 3,913 ग्राम विकास समितियों और 58 नगरपालिकाओं में चुनाव हुए थे । इन चुनावों के माध्यम से ग्राम विकास समितियों और नगरपालिकाओं में 250,000 जन प्रतिनिधियों को चुना गया ।

तत्कालीन राजा ज्ञानेंद्र शाह के सत्ता संभालने के बाद, उन्होंने प्रारंभ में सन् 2005 में स्थानीय निकायों के लिए नगरपालिका चुनाव कराए । इस चुनाव में 22 पार्टियों ने भाग लिया, जिसका प्रमुख राजनीतिक दलों ने बहिष्कार किया था । 58 नगरपालिकाओं में से 22 में निर्विरोध चुनाव हुए । कुल 36 नगरपालिकाओं में मतदान हुआ । उस समय, महापौरों, उप - महापौरों, वार्ड अध्यक्षों और 58 नगरपालिकाओं के सदस्यों सहित 4,146 पदों के लिए चुनाव हुए थे ।

हालांकि, राजनीतिक परिवर्तनों के कारण चुनाव को कोई संवैधानिक मान्यता नहीं मिली । संविधान सभा द्वारा संविधान तैयार किए जाने के बाद सन् 2017 में स्थानीय स्तर के चुनाव हुए । ये चुनाव तीन चरणों में जून 16 और 28 तथा सितम्बर 18, 2017 को हुए । तत्पश्चात् सन् 2022 के स्थानीय चुनाव 13 मई 2022 को 6 महानगरों, 11 उप-महानगरों, 276 नगरपालिकाओं और 460 ग्रामीण नगरपालिकाओं में आयोजित किए गए थे ।

संसदीय चुनावों का इतिहास (सन् 1958 से सन् 2022 तक)- नेपाल में लोकतंत्र की स्थापना के बाद इतिहास में पहला आम चुनाव 18 फरवरी,1959 को शुरू हुआ और विभिन्न चरणों में 45 दिनों के बाद उसी वर्ष के अप्रैल 3 को संपन्न हुआ । राजा महेंद्र द्वारा सन् 1961 में दल - मुक्त पंचायत प्रणाली लागू करने के बाद, राजनीतिक दलों पर 30 वर्षों के लिए प्रतिबंध लगा दिया गया था । सन् 1979 में विभिन्न शैक्षिक मांगों के साथ शुरू हुआ छात्र आंदोलन ने एक राजनीतिक रूप ले लिया ।

समाज के विभिन्न वर्गों ने पंचायत के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया । पंचायत व्यवस्था के खिलाफ जनता के भारी विरोध के बाद, तत्कालीन राजा बीरेंद्र ने घोषणा की कि मई 24, 1979 को इस बात पर जनमत संग्रह कराया जाएगा कि बहुदलीय व्यवस्था को अपनाया जाए या संशोधित पंचायत व्यवस्था को बनाए रखा जाए । मई 2, 1980 को वयस्क मताधिकार के आधार पर एक जनमत संग्रह आयोजित किया गया था । जनमत संग्रह के परिणाम संशोधित पंचायत व्यवस्था के पक्ष में आए । 15 दिसम्बर, 1980 को संविधान में तीसरा संशोधन किया गया, जिसमें वयस्क मताधिकार के आधार पर विधायी चुनाव कराने के प्रावधान शामिल थे । यह जनमत संग्रह नेपाल के चुनावी इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण घटना है ।

सुधारित पंचायत प्रणाली नेपाली लोगों की राजनीतिक आकांक्षाओं को पूरा करने में विफल रही क्योंकि इसमें लोकतंत्र की बुनियादी विशेषताओं को शामिल नहीं किया गया था । परिणामस्वरूप सन् 1989 में पंचायत व्यवस्था के विरुद्ध एक जन आंदोलन हुआ ।

जन आंदोलन के माध्यम से अप्रैल 8,1990 को पंचायत व्यवस्था समाप्त कर दी गई और देश में लोकतंत्र बहाल किया गया । नेपाल अधिराज्य का संविधान - 1991, 10 नवम्बर, 1990 को लागू किया गया था । इस संविधान ने देश में संवैधानिक राजतंत्र और संसदीय प्रणाली को संस्थागत रूप दिया । सन् 1990 के पहले जन आंदोलन द्वारा लोकतंत्र की बहाली के बाद, नेपाल के इतिहास में दूसरी बार 12 मई, 1991 को आम चुनाव हुए । इसी प्रकार, तत्कालीन कांग्रेस सरकार द्वारा सन् 1994 में पांच वर्षीय संसद को भंग करने के बाद, नवम्बर 14, 1994 को मध्यावधि चुनाव हुए । इसके बाद, मई 3 और 17,1999 को दो चरणों में आम चुनाव हुए । लेकिन 13 फरवरी, 1996 में माओवादी विद्रोह शुरू होने के बाद चुनाव प्रक्रिया में कुछ असुविधाएँ उत्पन्न हुईं । इस विद्रोह ने देश में बड़े राजनीतिक बदलाव लाए । माओवादियों और सात सत्तारूढ़ दलों के बीच द्वन्द्व समाधान पर हुए समझौते के बाद, जनवरी 15, 2007 को नेपाल का अंतरिम संविधान - 2007 लागू किया गया था।

नेपाल का अंतरिम संविधान - एक ऐतिहासिक कानूनी दस्तावेज था जिसने सन् 2006 के जन आंदोलन के बाद सर्वोच्च कानून के रूप में कार्य किया और देश को राजशाही से धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य में परिवर्तित किया । इसने सन् 1990 के संविधान का स्थान लिया और एक नया स्थायी संविधान तैयार करने के लिए 601 सदस्यीय संविधान सभा की स्थापना की तथा राजा की सक्रिय शक्तियों को समाप्त कर दिया ।

पहला संविधान सभा चुनाव- नेपाली जनता ने इतिहास के विभिन्न कालखंडों में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली के लिए कठिन संघर्ष किए हैं । इस संदर्भ में, सन् 2006 के जन आंदोलन की सफलता के बाद, जनता की अपनी संविधान बनाने की इच्छा को पूरा करने के लिए 10 अप्रैल, 2008 में संविधान सभा के चुनाव आयोजित किए गए थे । संविधान सभा चुनावों के बाद, राजनीतिक दलों की सहमति से जन प्रतिनिधित्व प्रणाली में महत्त्वपूर्ण प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया । तदनुसार, संविधान सभा और विधान सभा में प्रतिनिधित्व के लिए मिश्रित प्रणाली के आधार पर चुनाव कराने का प्रावधान किया गया था ।

नेपाल के अंतरिम संविधान, 2007 में पहली बार वयस्क मताधिकार के साथ - साथ आनुपातिक प्रतिनिधित्व को अपनाया गया । इस चुनाव में मिश्रित चुनावी प्रणाली (240 प्रत्यक्ष, 335 आनुपातिक और 26 मनोनीत) को अपनाया गया, जिसने देश के लिए ऐतिहासिक रूप से संघीय लोकतांत्रिक गणराज्य बनने का मार्ग प्रशस्त किया । यह चुनाव संविधान सभा सदस्य चुनाव अधिनियम, सन् 2008 के तहत आयोजित किया गया था।

द्वितीय संविधान सभा चुनाव- सभा को दो साल के भीतर संविधान लागू करने का जनादेश मिला था । चूंकि राजनीतिक दल संविधान की विषयवस्तु पर सहमति नहीं बना सके, इसलिए संविधान का मसौदा तैयार करने में चार साल लग गए, और इस दौरान समय सीमा को बार - बार बढ़ाया गया । लेकिन संविधान लेखन का कार्य पूरा नहीं हो सका । संविधान सभा के कार्यकाल के विस्तार के संबंध में नवम्बर 25, 2011 के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार, मई 27, 2012 के बाद संविधान सभा के कार्यकाल के विस्तार का कोई प्रावधान नहीं था, और संविधान सभा का कार्यकाल उसी दिन समाप्त हो गया ।

इस प्रकार, संविधान सभा द्वारा संविधान का मसौदा तैयार करने का कार्य अधूरा रह गया । हालांकि, संविधान सभा द्वारा संविधान का मसौदा तैयार करने की नेपाली जनता की प्रबल इच्छा के अनुरूप, 19 नवम्बर 2013 को संविधान सभा के लिए एक और चुनाव आयोजित किया गया । दूसरी संविधान सभा में 240 सदस्य प्रत्यक्ष चुनाव प्रणाली के माध्यम से और 335 सदस्य आनुपातिक चुनाव प्रणाली के माध्यम से चुने गए थे । नेपाल की दूसरी संविधान सभा ने 20 सितंबर, 2015 को नेपाल का संविधान लागू किया ।

संविधान सभा के बाद आम चुनाव- 20 सितम्बर, 2015 में संविधान को अपनाने के बाद, 26 नवम्बर 26 और 3 दिसम्बर, 2017 को दो चरणों में आम चुनाव हुए । इस चुनाव में 1 करोड़ 54 लाख 27 हजार 938 मतदाता थे, जिनमें से 68.667 प्रतिशत ने मतदान किया । इसी प्रकार, प्रतिनिधि सभा का चुनाव सन् 2022), नेपाल के संविधान ङ्क 2015 के तहत आयोजित होने वाला दूसरा चुनाव है । प्रतिनिधि सभा के 275 सदस्यों के चुनाव के लिए देशव्यापी चुनाव नवम्बर 20, 2017 को आयोजित किए गए थे । प्रतिनिधि सभा के चुनावों के साथ - साथ सभी सात प्रांतीय विधानसभाओं के चुनाव भी हुए ।

2082 में प्रतिनिधि सभा के चुनाव क्यों ?- सितम्बर 8 और 9, 2025 को नेपाल भर में बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन हुए । इनका आयोजन मुख्य रूप से छात्रों और युवाओं, यानी जेन जी द्वारा किया गया था । सितम्बर 9 को हुई हिंसक घटनाओं में काठमांडू के साथ - साथ देश भर के प्रमुख शहरों और स्थानों को निशाना बनाया गया । प्रदर्शनकारियों ने सरकारी इमारतों और कार्यालयों के साथ - साथ मंत्रियों और सांसदों के घरों में भी आग लगा दी । कई नेताओं पर हमले हुए। उसी दिन प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली ने इस्तीफा दे दिया । गृह मंत्री रमेश लेखक, कृषि मंत्री रामनाथ अधिकारी और स्वास्थ्य मंत्री प्रदीप पौडेल सहित राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी के 21 सांसदों ने भी इस्तीफा दे दिया । इसी प्रकार, राष्ट्रीय प्रजातंत्र पार्टी के सभी संघीय और प्रांतीय सांसदों ने इस्तीफा दे दिया था ।सितम्बर 11 और 12, 2025 को सैन्य मुख्यालय में एक बैठक आयोजित की गई, जिसमें राष्ट्रपति रामचंद्र पौडेल, सेना प्रमुख अशोकराज सिगदेल और जेन जी के प्रतिनिधियों ने भाग लिया । सितम्बर 12 को हुई बैठक में पूर्व मुख्य न्यायाधीश सुशीला कार्की को अंतरिम प्रधानमंत्री नियुक्त करने पर सहमति बनी और उसी दिन सुशीला कार्की ने नेपाल के अंतरिम प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ली । उनकी सिफारिश पर प्रतिनिधि सभा को भंग कर दिया गया और अंतरिम सरकार ने छह महीने के भीतर प्रतिनिधि सभा के चुनाव कराने पर सहमति जताई ।

इस प्रकार, नेपाल सरकार की सिफारिश पर, जैसा कि नेपाल के राष्ट्रपति रामचंद्र पौडेल ने सितम्बर 12, 2025 को घोषणा की थी, यह घोषणा की गई कि प्रतिनिधि सभा के 275 सदस्यों के चुनाव के लिए नेपाल में मार्च 5, 2026 को प्रारंभिक आम चुनाव आयोजित किए जाएंगे । इसी कारणवश आम चुनाव फाल्गुन 21 यानी 5 मार्च को हो रहे हैं । दरअसल, आम चुनाव सन् 2028 में होने थे ।

निष्कर्ष-राणा प्रधान मंत्री शमशेर जंगबहादुर राणा के शासनकाल के दौरान, पंचायतों को स्थानीय प्रतिनिधि निकायों के रूप में स्थापित किया गया था, और कुछ स्थानों पर पंचायतों की स्थापना की गई थी । इसमें अपनाई गई चुनावी प्रणाली वर्तमान वयस्क मताधिकार प्रणाली से भिन्न थी, जिसमें प्रत्येक परिवार के मुखिया का प्रतिनिधित्व उसके द्वारा चुने गए एक व्यक्ति द्वारा मुख्य पंच और अन्य पंचों के रूप में किया जाता था । इस चुनाव की एक और दिलचस्प बात यह थी कि मुख्य पंच के लिए स्थानीय जमींदार होना अनिवार्य कर दिया गया था । उन्हें जनता का प्रतिनिधि माना जाता था ।

2007 की क्रांति के बाद, सन् 2026 तक कई दूरगामी राजनीतिक परिवर्तन हुए हैं । देश में न केवल स्थानीय निकाय और विधायी चुनाव हुए हैं, बल्कि राष्ट्रीय महत्त्व के मुद्दों पर जनमत संग्रह और निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए संविधान का मसौदा तैयार करने हेतु संविधान सभा के सदस्यों के चुनाव भी दो बार आयोजित किए जा चुके हैं ।

चुनाव प्रक्रिया के इतने लंबे समय के बावजूद, देश आज तक एक स्थायी लोकतंत्र और एक स्थायी व्यवस्था स्थापित करने में सक्षम नहीं हो पाया है। अस्थिरता, अराजकता और कानून की अवज्ञा यहाँ की व्यवस्था की पहचान बन चुकी है।

(इस लेख के अध्ययन में, चुनाव आयोग द्वारा प्रकाशित पुस्तकों और शोध रिपोर्टों का उपयोग किया गया है, जो डेटा संकलन के लिए द्वितीयक स्रोत हैं, और लेखक के स्वयं के अनुभवों और ज्ञान का भी उपयोग किया गया है । - सं.)

संगठन से समाज तकः वैचारिक यात्रा

राजगोपाल पी.व्ही.

तमाम सीमाओं के बावजूद मेरे द्वारा स्थापित जन-संगठन 'एकता परिषद' लम्बे समय से काम करता रहा। 'जनादेश २००७,' 'जनसत्याग्रह २०१२' और 'जनांदोलन २०१८' के आन्दोलनों ने संगठन को मजबूत बनाया और इसी मजबूती के आधार पर सरकार की नीतियों को बदलने में हम लोग सफल हुए। 'वनाधिकार अधिनियम,' '१० सूत्रीय आगरा समझौता' और 'भूमि अधिगृहण और पुनर्वास नीति २०१३' आदि इस बात का उदाहरण हैं कि एक व्यवस्थित जन-संगठन के सहारे काफी हद तक नीतियों को प्रभावित किया जा सकता है।

इन तमाम नीतियों और कानूनों के सहारे जमीनी स्तर पर जो बदलाव आया है उसे देखने और समझने के लिए मैंने पिछले दिनों मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ का दौरा किया। वनाधिकार के तहत भूमि प्राप्त २५,000 किसानों के साथ दमोह और कटनी में महत्वपूर्ण काम हो रहा है। उन किसानों के साथ काम करने वाले करीब ६० कार्यकर्ताओं के साथ सीधे संवाद करने का प्रत्यक्ष मौका मिला। इन कार्यकर्ताओं में जो उत्साह और आत्मविश्वास देखने को मिला उससे मैं अत्यधिक प्रभावित हुआ हूं।

ऐसा लगता है कि २५,000 परिवार नैसर्गिक खेती के माध्यम से अपने पैरों पर खड़े हो रहे हैं। वे स्वयं जल, जंगल, जमीन को व्यवस्थित कर रहे हैं और अपने आर्थिक, सामाजिक हालातों को सुधार रहे हैं। अब ये परिवार किसी पर निर्भर नहीं हैं, बल्कि वे उल्टा संगठन को मदद करने की स्थिति में हैं। आप अंदाजा लगा सकते हैं कि जिन भूमिहीनों को संगठित करने के लिए १० कार्यकर्ता लम्बे समय तक काम करते रहे थे, वहां अब २५,000 किसान कार्यकर्ता हैं जो स्वयं अपनी दम पर अन्य भूमिहीन लोगों के लिए काम कर सकते हैं और जरूरत पड़ने पर संगठन की व्यापकता के लिए आर्थिक सहयोग भी दे सकते हैं। इससे एक बात साफ हो रही है कि एक समय जो संगठन कार्यकर्ताओं पर आधारित था, अब वह पूर्ण रूप से जनाधारित संगठन बन चुका है। अब जन-संगठन की कल्पना साकार होते हुए दिखाई पड़ रही है। इस यात्रा के दौरान मध्यप्रदेश के उमरिया जिले से आए आदिवासी किसानों से भी चर्चा करने का मौका मिला। इनके अनुमान के अनुसार उमरिया एवं शहडोल जिले के करीब २५,000 आदिवासियों को 'वनाधिकार' के तहत जमीन मिल चुकी है। लगभग २ एकड़ प्रति परिवार के हिसाब से भी गणना करें, तो करीब ५०,000 एकड़ जमीन भूमिहीनों को मिल चुकी है। कल जो अपने आपको भूमिहीन मान रहे थे, वे अपने आप को आज किसान कहने लगे हैं।

इस संवाद में मीरा बहन भी शामिल थीं जो स्वयं एक गोंड़ आदिवासी परिवार से हैं। मीरा बहन ने अपने खेत को इस ढंग से सजाया है कि रास्ते से गुजरने वाला हर व्यक्ति खड़े होकर उनके खेत को निहारता है। जिन आदिवासियों को जमीन प्राप्त हुई है उनमें से करीब ८० प्रतिशत लोग अपने पैरों पर खड़े हो गये हैं और स्वावलम्बन की ओर बढ़ रहे हैं। उन्होंने कहा कि २० प्रतिशत लोग जिन्हें खेती करने में कठिनाई हो रही है, उन्हें संगठन के द्वारा मदद पहुंचानी होगी, ताकि वे भी अन्य लोगों की तरह स्वावलम्बन की दिशा में आगे बढ़ सकें। अनुमान है कि 'वनाधिकार कानून' के तहत आवेदन दे चुके आदिवासियों में ५० प्रतिशत लोगों को अभी भूमि अधिकार मिलना बाकी है। उन्होंने उम्मीद जताई कि उन परिवारों को भी 'वनाधिकार' के तहत जमीन जल्दी प्राप्त होगी।

इन मित्रों के अनुमान के अनुसार अब उमरिया, शहडोल जिलों में २५,000 परिवार ऐसे हैं जो जन-संगठन को अपनी ही दम पर आगे ले जा सकते हैं। उनके अनुसार जो परिवार भूमि-स्वामी बने हैं, वे निःसंकोच हर साल एक क्विंटल अनाज संगठन की व्यापकता के लिए देना चाहेंगे। एक कार्यकर्ता आधारित संगठन अब तेजी से जन-संगठन बनता जा रहा है। चर्चा के दौरान इन मित्रों के चेहरे पर जो उत्साह देखने को मिला, उससे मुझे भरोसा होने लगा है कि जन-संगठन की कल्पना अब तेजी से साकार होती जा रही है। अगर कटनी, दमोह, उमरिया, शहडोल में हजारों किसान अपनी ही दम पर संगठन को आगे ले जाने की तैयारी में हैं तो मैं इस बात को मान सकता हूं कि यही तस्वीर अन्य जिलों में भी देखने को मिलेगी।

टीकमगढ़ जिले का संगठन बहुत दिनों से बिना किसी सहयोग के संगठनात्मक गतिविधियों को अपनी दम पर आगे बढ़ा रहा है। श्योपुर, शिवपुरी, ग्वालियर, सिवनी, सीधी और सतना से भी ऐसी ही खबरें निरन्तर मेरे पास आ रही हैं। ४० साल के लम्बे अंतराल की संगठन की यात्रा संस्थाओं से प्रारम्भ होकर कार्यकर्ताओं की ओर और अब कार्यकर्ताओं से आम ग्रामीणों की ओर चल पड़ी है। अब जरूरत इस बात की है कि अनुभवी कार्यकर्ता जो लम्बे समय से एक जन-संगठन का सपना देख रहे थे वे इस प्रक्रिया को गतिशील बनाने और जन-संगठन की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में जुट जायें। अब इस जन-संगठन के माध्यम से शेष भूमिहीनों को भूमि दिलाने का काम संगठन को अपने हाथ में लेना होगा। संगठन की संरचना के पीछे गाँधी और विनोबा का जो आदर्श प्रबल रहा है उन आदर्शों को साकार करना आज की आवश्यकता है। हम सबके प्रयासों से संगठन ने जो लम्बा रास्ता तय किया है, उस पर हम गर्व कर सकते हैं। यह नमूना सिर्फ हमारे लिए ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया के लिए उदाहरण बनकर प्रेरणा दे सकता है। (सप्रेस)

निर्दलीय के स्वामित्व एवं अन्य विषयों से संबंधित विवरण

घोषणा

फार्म चार (नियम आठ देखिए)

1.	प्रकाशन स्थान	:	नई दिल्ली
२.	प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३-४	मुद्रक व प्रकाशक का नाम	:	कैलाश आदमी/निर्दलीय प्रकाशन
	नागरिकता	:	भारतीय
	पता	:	राघव भवन, गली क्रं. ६/७२ दयालपुर, दिल्ली ११० ०९०
५.	प्रधान संपादक	:	कैलाश श्रीवास्तव
	नागरिकता	:	भारतीय
	पता	:	राघव भवन, गली क्रं. ६/७२ दयालपुर, दिल्ली ११० ०९०
६.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों	:	
	तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक से साझेदार या हिस्मेदार हो	:	कैलाश श्रीवास्तव/निर्दलीय प्रकाशन

मैं कैलाश श्रीवास्तव एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

(कैलाश श्रीवास्तव)

दिनांक- २८ फरवरी २०२६

प्रकाशक के हस्ताक्षर

जे.के.स्टील फर्नीचर
भोपाल
जीवन मारण
स्वत्वाधिकारी संपर्क-9826422823

१. पेट्रोल पंप के सामने, चूना भट्‌टी, कोलार मुख्य मार्ग, २. सर्वधर्म कॉलोनी सी सेक्टर पुल समीप कोलार मुख्य मार्ग, ३. बरखेड़ी कलां मुख्य मार्ग, भोपाल

THE BEST MEDIA TO ENHANCE YOUR FOOTWEAR BUSINESS

Footbizz
Step into the Future of Footwear

SCAN THE QR CODE TO DOWNLOAD THE APP

INDIA'S FIRST
B2B FOOTWEAR APP
THAT SOLVES EVERY
PROBLEM FACED BY
MANUFACTURERS
AND WHOLESALERS.

Combo Offer
@4000/-
DFMN + FOOTBIZZ
Get 1 Year Subscription
SOFT COPY
ALSO AVAILABLE

Book Your
Advertisement Today
& Promote Your Brand
in India & Abroad

DELHI FOOTWEAR MARKET NEWS
ESTD. 1984
Footbizz

DELHI FOOTWEAR MARKET NEWS
25, Central Market, Ashok Vihar, Phase-1, New Delhi -110052
Ph. : 011-47528361, Mob : 9717730178, Email: dfmn22@gmail.com

RAM NIWAS & SONS
SRD STEELS (P) LTD.

SETH RAM NIWAS GUPTA

SANJEEV GUPTA

RAJEEV GUPTA

DEEPAK GUPTA

skgc

SHRI KRISHAN GRIT CO.
SKGC MINERALS LTD.

BRANCHES

Delhi • Mumbai • Bhopal • Bhilai • Ludhiana • Faridabad • Ahmedabad
Ghaziabad • Roorkee • Bangalore • Indore • Jaipur • Kanpur (U.P.)

Dr. Sanjeev Gupta (The Winner of)

- Global Business Icon Award - 2018
- Asia One Global Indian of the Year 2018 19
- India's Greatest Brands 2018 19
- ARCH of Excellence Award
- Winner of National Award in 2021
- Meri Dilli Shresth Shree Sammaan Nov. 2020
- ISI Mark from Bureau of Indian Standard - Dec. 2020
- Meri Dilli Shresth Shree Sammaan - Aug. 2022

स्वामी-मुद्रक-प्रकाशक-संपादक कैलाश श्रीवास्तव 'आदमी' द्वारा राघव भवन,गली क्र. 6/72 दयालपुर,दिल्ली 110090 से प्रकाशित,निर्दलीय प्रेस,भोपाल से मुद्रित।